राष्ट्रिय संस्कृत संस्थानम्
नवदेहली

गङ्गानाथ झा केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ ग्रन्थमाला
॥ ४ ॥

बदरीनाथविरचिता

चक्रकौमुदी

सम्पादकः
जीवेश्वर झा

Rashtriya Sanskrit Sansthan

(Under the auspices of the Ministry of Education, Govt. of India)

NEW DELHI

GANGANATHA JHA KENDRIYA SANSKRIT VIDYAPEETHA

TEXT SERIES

General Editor

Dr. G. C. TRIPATHI

No 4

CHAKRA KAUMUDI

(A treaties on the six plexus in the human body)

of

BADARINATHA

Edited by

JEEVESHWAR JHA

Allahabad

1979

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्
(केन्द्रीयशिक्षामन्त्रालयस्याङ्गभूतम्)
नवदेहली

●

गंगानाथझाकेन्द्रीयसंस्कृतविद्यापीठग्रन्थमाला

प्रधानसम्पादकः
डॉ० गयाचरण त्रिपाठी

●

चतुर्थं प्रसूनम्

चक्रकौमुदी

बदरीनाथविरचिता

सम्पादकः
जीवेश्वर झा

गंगानाथझाकेन्द्रीयसंस्कृतविद्यापीठम्
मोतीलाल नेहरू पार्क
इलाहाबाद-२

॥४॥

बदरीनाथविरचिता

चक्रकौमुदी

सम्पादकः
जीवेश्वर झा

गंगानाथझाकेन्द्रीयसंस्कृतविद्यापीठम्
मोतीलाल नेहरू पार्क
इलाहाबाद-२
१९७९

प्रकाशकः
डा० गयाचरणत्रिपाठी
प्राचार्यः
गङ्गानाथझाकेन्द्रीयसंस्कृतविद्यापीठम्
मोतीलाल नेहरू पार्क
इलाहाबाद-२११००२

मूल्यम्…

978-93-83135-10-3

मुद्रक :
श्री विष्णु आर्ट प्रेस
२५७ चक, जीरो रोड, इलाहाबाद ।

Foreword

महीं मूलाधारे कमपि मणिपूरे हुतवहं
स्थितं स्वाधिष्ठाने हृदि मरुतमाकाशमुपरि ।
मनोऽपि भ्रूमध्ये सकलमपि भित्त्वा कुलपथं
सहस्रारे पद्मे सह रहसि पत्या विहरसि ।।

—सौन्दर्यलहरी (श्लो० ९)

The present work deals with the seven *Cakras* or plexus believed to be situated in human body along the spinal cord. Thease are said to be the sources of all physical and mental energy and play a very significant role in the spiritual upsurge of the individual soul trying to attain the Absolute. This spiritual energy conceived as a serpent sleeping in a coiled state in the lowermost *Cakra*, can be made to rise through meditation whereupon it moves upwords and piercing through the upper five *Cakras* meets the *Parabrahman* in the "*Cakra* of thousand Petals (or spokes)" in the head. This is the highest state of *samādhi* and a source af perpetual bliss.

The belief in the *cakras*, kuṇḍalinī and the seat of *Parabrahman* in the head etc. seems to be very old, perhaps as old as the system of Yoga which certainly dates back to pre-Aryan period. It has been vigorously propagated by the followers of the Nātha Sampradāya in the medieval ages and the belief has even been incorporated in the daily ritual of *Pūja* in the Tantric form of worship.

Though the work is not of very high antiquity— it was written sometime during the last century— yet it is an important treatise of its kind in as much as it treats the subject in a simple as well as lucid and yet scholarly manner. No details worthy of note regarding the *Cakras* and their nature have been left out and these have been presented in a transparent manner in a simple language and style.

Only one manuscript of this work has come to light till now. This was most probably collected in Mithila which Badarinatha actually haled from, and is presently preserved in the Manuscripts Library of this Vidyapeetha.

Shri Jeeveshwar Jha, Asstt. Curator in this Vidyapeetha, has carefully restored the text and nicely translated it into Hindi so that this technical subject has become more clear to the many non Sanskrit knowing people. The figures and sketches provided in the book contribute further to the proper understanding of the text.

Inspite of the fact that some works on this subject are already available (e. g. *ṣaṭcakranirūpaṇa* translated by Arthur Avlon in his book *Serpent Power*), I think that this small work has its own importance in view of its candid and easily intelligible treatment of the subject.

I am confident that this work shall be received well by the research students and scholars and shall prove popular.

G. C. Tripathi
Principal
G. N. Jha K. S. Vidyapeetha

Allahabad
June 1st, 1979

विषयसूची

प्रज्ञानं ब्रह्म यद्वाक्यमहं ब्रह्मास्मि यत्पुनः ।
तत्त्वमसीति यद्वाक्यमयमात्मा ब्रह्म इत्यपि ॥
चतुष्टयमहावाक्यैरेतद् ब्रह्माभिधीयते ।
ब्रह्मविच्चापि लोकेषु ब्रह्मरूपेण वर्त्तते ॥

—चक्रकौमुदी ७.१६-१७


विद्यापीठ-सुमञ्जुल-
२५-९-१८७१ ई.

प्रस्तावना

चक्रकौमुदीकार **बदरीनाथ** उजान[1] (उद्यान) ग्राम के **'नरोनए पूरे'** कुल-संभूत पराशर गोत्रीय श्रोत्रिय मैथिल ब्राह्मण थे।[2] आपके पिता का नाम **भोलानाथ** था। आपके पुत्ररत्न न था। केवल दो कन्याएँ थीं, जो **'खण्डवलाकुल'** संभूत मधुबनी के **बाबू हर्षधारी सिंह** तथा **बाबू तन्त्रधारी सिंह** के साथ विवाहित थीं। आजकल आपके दौहित्रवंश में **बाबू चन्द्रधारी सिंह** 'हिमकर' तथा **बाबू बुद्धिधारी सिंह** 'रमाकर' एवं **बाबू जयधारी सिंह** 'प्रभाकर' आदि जीवित हैं। यद्यपि लेखक ने अपने निवासस्थानादि के विषय में प्रस्तुत रचना में उल्लेख नहीं किया है, फिर भी मातृका के मङ्गलाचरण में अपने को मिथिला में उत्पन्न बतलाया है।[3]

मिथिला जनपद के श्रोत्रिय मैथिल परिवार में **महाराजा लक्ष्मीश्वर सिंह** के समय **'बदरीनाथ'** नाम से प्रसिद्ध दो व्यक्ति हुए। तथ्य यह है कि प्रथम, **'बदरीनाथ'** चक्रकौमुदीकार हैं और दूसरे आधुनिक संस्कृत साहित्य के ख्यातिप्राप्त काश्यपगोत्रीय **कविशेखर बदरीनाथ झा** थे। इनके अतिरिक्त एक और **बदरीनाथ उपाध्याय** नामक विद्वान का **पं० त्रिलोकनाथ मिश्र** ने अपने निबन्ध में चक्रकौमुदीकार के रूप में उल्लेख किया है।[4] परन्तु ग्रन्थ के अन्तः साक्ष्य 'पुष्पिका' से यह स्पष्ट है कि चक्रकौमुदीकार **बदरीनाथ** श्रोत्रिय मैथिल ब्राह्मण थे।[5] साथ ही, **महाराजा लक्ष्मीश्वर सिंह** के समय में मैथिल श्रोत्रिय ब्राह्मण में उपरोक्त दोनों **'बदरीनाथ'** के अतिरिक्त **बदरीनाथ उपाध्याय** के नाम से प्रसिद्ध हुए ही नहीं, ऐसा मैथिल पञ्जीकार से जिज्ञासा करने पर ज्ञात हुआ है। उपरोक्त दूसरे **'बदरीनाथ'** साहित्य के विद्वान थे और तन्त्रादिशास्त्रों में उनकी रुचि न थी। ये वैष्णव थे, तथा अन्य कतिपय ख्यातिप्राप्त ग्रन्थों के अतिरिक्त **एकावलीपरिणय** एवं **राधापरिणय** जैसे मैथिली एवं संस्कृत में महाकाव्यों की रचना की। इनकी रचना **चक्रकौमुदी** नहीं है। यह उनके स्वलिखित प्रकाशित तथा अप्रकाशित ग्रन्थ सूची से स्पष्ट हो जाता है। इस विषय

---

१. दरभङ्गा मण्डलान्तर्गत, बिहार।

२. द्र० वंशवृक्ष।

३. सैषा श्रीमिथिलोद्भवेन बदरीनाथेन विद्वन्मुदे। च० कौ०, प्र० प०, श्लोक २।

४. मिथिलामिहिर, मिथिलाङ्क।

५. इति मैथिलश्रोत्रियश्रीबदरीनाथविरचितायां चक्रकौमुद्यां मूलाधारचक्रविवृतिर्नाम प्रथमः परिच्छेदः। प्रत्येक चक्र की पुष्पिका द्रष्टव्य।

में 'कविशेखर पुष्पाञ्जलि' अभिनन्दन ग्रन्थ में **डॉ० रामकरणशर्मा**[1] तथा **डॉ० त्रिलोकनाथ झा**[2] के निबन्ध द्रष्टव्य हैं।

एम० कृष्णमाचारियर महोदय ने अपनी पुस्तक में **बदरीनाथ** द्वारा रचित **'वृत्तप्रदीप'** नामक ग्रन्थ का उल्लेख किया है।[3] साथ ही क्रमशः **'हिस्ट्री आफ द क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर'**,[4] **कैटेलागस कैटेलागरम**[5] तथा **न्यू कैटेलोगस कैटेलोगरम**[6] में चक्रकौमुदीकार **बदरीनाथ** एवं **बदरीनाथ उपाध्याय** का उल्लेख मिलता है। उक्त दोनों में **उपाध्याय बदरीनाथ** मैथिल श्रोत्रिय ब्राह्मण नही हैं ऐसा पहले स्पष्ट हो चुका है।

ग्रन्थ के अन्तःसाक्ष्य के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि **बदरीनाथ** मैथिल श्रोत्रिय ब्राह्मण थे तथा **महाराजा लक्ष्मीश्वर सिंह** के दरबार पण्डित के पद पर थे।[7] मिथिला जनपदीय किंवदन्ती के अनुसार आपसे प्रसन्न होकर उक्त महाराजा ने जीवन निर्वाह हेतु उपहार स्वरूप भूमि भी दिया था। उसी प्रकार मिथिला के कतिपय मूर्धन्य विद्वानों, जैसे **पं० कृष्णमाधव झा, स्व० पं० जीवनाथ झा, पं० धर्मनाथ झा, पं० श्यामसुन्दर झा** तथा **पं० तेजनाथ झा** आदि से जिज्ञासा करने पर यह स्पष्ट हो गया कि उपरोक्त तथ्य सत्य है। **पं० श्यामसुन्दर झाजी** के कथनानुसार किंवदन्ती तो यह भी प्रचलित है कि उक्त **बदरीनाथ** बहुत बड़े तान्त्रिक थे और उनकी पत्नी महासिद्ध शावर थी। एक दिन उनकी पत्नी ने अपने नौकरानी को अपने सिर के जूँ हेरने के लिए कहा। जब नौकरानी उक्त कार्य करने लगी तो उनके समस्त सिर में आँख देखकर भयभीत होकर वहाँ से रोती हुई भाग गई। शोरगुल सुनकर लेखक (बदरीनाथ) भीतर गए और अपनी पत्नी से कहने लगे कि 'अपने व्यक्तियों के साथ यदि इस प्रकार का व्यवहार करेंगी तो कौन घर का कार्य कर सकेगा ? यदि यही इच्छा है तो अपने ही दोनों के मध्य दोनो में अपनी-अपनी 'माया' और 'शक्ति' का प्रदर्शन कर हास्य-विनोद उपस्थित करें। अन्यथा अन्य व्यक्ति तो भय से भागेंगे और समाज में अप्रतिष्ठा होगी। अतः इससे तो यह स्पष्ट होता है कि **बदरीनाथ** एक बड़े तान्त्रिक थे और

---

१. कविशेखर पुष्पाञ्जलि, पृ० ९-१३।

२. वही, पृ० ६-८।

३. हिस्ट्री आफ क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर, ले० एम० कृष्णमाचारियर, पृ० ६११।

४. वही।

५. कैटलोगस कैटलोगरम, ले० थियोडोर आफ्रेक्ट, पृ० ३६६।

६. न्यू कैटलोगस कैटलोगरम, मद्रास वि० वि०, मद्रास, पृ० २८१।

७. 'प्रतापोन्नतराज्यस्य महाराजस्य भूपतेः। श्रीलक्ष्मीश्वरसिंहस्य नयतामुदमादरात्'। च० कौ०, प्र० प०, श्लोक ३।

इसके अतिरिक्त सांख्य योग एवं अन्य आगम-निगम का आलोड़न करने के पश्चात ही प्रस्तुत **'चक्रकौमुदी'** की रचना की है।[१]

इनके वंशधरो में इनके चाचा (एकनाथ) के सन्तानों में प्रसिद्ध अर्थशास्त्र एवं मैथिली के विद्वान **प्रो० तन्त्रनाथ झा**, भारतीय प्रसिद्ध वैज्ञानिक **डॉ० शचीनाथ झा**, पत्रकार **श्री बोधनाथ झा** आदि विद्यमान हैं।

लेखक का समय १९वीं शती है, क्योंकि कि **महाराजा लक्ष्मीश्वर सिंह** के समसामयिक होने का स्पष्ट प्रमाण ग्रन्थ में उल्लिखित है।[२] इस दृष्टि से उक्त महाराजा का राज्यकाल 'कोर्ट्स ऑफ वार्ड' के बाद १८६० ई० से ही प्रारम्भ हुआ है।[३] अत: निश्चित तिथि उपलब्ध नहीं होने पर भी लेखक महोदय का समय १९वीं शती का उत्तरार्द्ध मानना अधिक युक्तियुक्त प्रतीत होता है। वंशावली के आधार पर भी यह कहा जा सकता है कि आपके जामाता द्वय के समय के अन्तराल से उक्त समय सही प्रतीत होता है।

'चक्रकौमुदी' की मातृका **गंगानाथ झा केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, इलाहाबाद** के **हस्तलेख-विद्यानुसन्धान विभाग** में सुरक्षित है। प्रस्तुत मातृका देवनागरी लिपि में लिखित उत्तम स्थिति में है। इसमें कुल तीस पत्रक हैं, प्रति पत्र पन्द्रह पंक्तियाँ तथा प्रति पंक्ति बीस अक्षर हैं और इसका आकार २३ × १४ से० मी० है। तथा मातृका के अन्तिम पाँच पत्रक किञ्चित् कीटविद्ध है।

उक्त मातृका की दूसरी प्रति अन्य स्थानों में कहीं भी उपलब्ध नहीं है। जैसा कि **कैटलोगस कैटलोगरम, न्यू कैटलोगस कैटलोगरम** तथा अन्य मातृका सूचीपत्रों को देखने से स्पष्ट होता है। अत: पाठभेद संकलन का समावेश नहीं किया जा सका है। वैसे तो मातृका स्पष्ट अक्षरों में लिखित है फिर भी प्रतिलिपिकार के अज्ञान वश कतिपय स्थलों पर ष का ख, ख का ष, श का स, स का श तथा व का ब और व लिखा गया है जिसका निराकरण यथास्थान यथामति संपादक द्वारा कर दिया गया है।

'बहुजन हिताय' के आधार पर प्रकाशन समिति के निर्णयानुसार प्रस्तुत ग्रन्थ में हिन्दी भाषानुवाद का समावेश किया गया है। ग्रन्थ का अनुवाद ग्रन्थ

---

१. 'आलोक्यागमसांख्ययोगनिगमान् संयत्नतो धीमता', च० कौ०, प्र० प०, श्लोक २।

२. 'प्रतापोन्नतराज्यस्य महाराजस्य भूपतेः। श्रीलक्ष्मीश्वरसिंहस्य नयतामुदमादरात्। च० कौ०, प्र० प०, श्लोक ३।

३. हिस्ट्री आफ मैथिली लिटरेचर, ले० डॉ० जयकान्त मिश्र, भाग १ (मैथिली साहित्य का आधुनिक समय प्रारम्भ)।

सामग्री के मूल रूप में रखा गया है तथा भाव पक्ष को छोड़ दिया गया है। जहाँ जहाँ भाषानुवाद करते समय पारिभाषिक तान्त्रिक शब्दों का प्रयोग किया गया है वहाँ उसे कोष्ठक के अन्तर्गत स्पष्ट कर दिया गया है।

षट्चक्र निरूपण अथवा **षट्चक्र विवेचन** नामक अनेक ग्रन्थ लोकजीवन में अत्यधिक समादृत होने से इनके अनेकानेक संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। यह बंग प्रान्त के ख्यातिप्राप्त तान्त्रिकाचार्य **स्वामी पूर्णानन्द परमहंसदेव** विरचित **श्रीतत्त्व-चिन्तामणि**[१] ग्रन्थ का एक अध्याय (षष्ठ प्रकाश) मात्र है जिसमें सभी चक्रों का सम्पूर्ण रूप से वर्णन है। विभिन्न विद्वानों ने अत्यन्त मनोयोग से भाषानुवाद एवं टीका-टिप्पणियों सहित इसे प्रकाशित किया है। इसी के आधार पर एक विदेशी विद्वान आर्थर एभेलेन (Arthur Avalen) ने अंग्रेजी भाषा में एक बृहत्काय पुस्तक ही लिख डाली।[२] परन्तु भारतीय विद्वानों ने इसे उक्त ग्रन्थ का अविकल अनुवाद ही माना। म० म० **डॉ० गोपीनाथ कविराज** महोदय ने षट्चक्रों के विषय में लिखित अपने ग्रन्थ **तान्त्रिक साहित्य** में उन सभी लेखकों तथा टीकाकारों की सूची दी है जो विभिन्न संस्थाओं में उपलब्ध हैं, परन्तु प्रस्तुत **बदरीनाथ** विरचित **चक्रकौमुदी** का उल्लेख न तो मूल पुस्तक के रूप में किया है और न टीका अथवा भाषानुवाद के रूप में ही।[३] अतः षट्चक्रों पर लिखित अन्य ग्रन्थों की अपेक्षा तुलनात्मक दृष्टिकोण से ग्रन्थ में वर्णित बृहत् आधार से यह तथ्यतः स्पष्ट है कि यह **चक्रकौमुदी** एक स्वतन्त्र रूप से लिखित महत्त्वपूर्ण तान्त्रिक ग्रन्थ है, जिसमें योगिक प्रक्रियाओं के द्वारा सतचित् आनन्द को प्राप्त कर अभीप्सित फल प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त किया गया है।

ग्रन्थारम्भ मंगलाचरण से होता है, जिसमें द्वैतवाद के सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुए भी अद्वैतवाद के अनुसार ही नित्यानन्द चिदात्मक भगवान श्रीकृष्ण अर्थात् ब्रह्म से प्रार्थना के रूप में लेखक ने काम भाव से युक्त इस कलि-काल में विखिन्न हृदय के दावाग्नि को शमन करके मोक्ष प्राप्ति की कामना की है तथा अर्द्धनारीश्वर से युक्त श्रुति सिद्धि को मन में धारण करके उक्त ग्रन्थ की रचना की बात कही गई है।

ग्रन्थ का विभाजन सात परिच्छेदों में किया गया है जिसमें क्रमशः मूला-धारचक्र, स्वाधिष्ठानचक्र, मणिपूरचक्र, अनाहतचक्र, विशुद्धचक्र, आज्ञाचक्र तथा

---

१. षट्चक्र निरूपणम्, संवत् २०११, प्राक्कथन तथा तान्त्रिक साहित्य, लेखक म० म० डॉ० गोपीनाथ कविराज, पृ० ६६४।

२. सर्पेण्ट पावर, ले० आर्थर एवेलेन।

३. तान्त्रिक साहित्य, ले० म० म० डॉ० गोपीनाथ कविराज, पृ० १९७-१९८; ६६४-६६७।

सहस्रारचक्र आदि हैं। प्रत्येक चक्र में प्रत्येक चक्र की अलग-अलग रूप से स्थिति को स्पष्ट किया गया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में विद्वान लेखक ने नित्य आनन्दस्वरूप **चिदात्मक** ब्रह्म को प्राप्त करने के मार्ग को प्रशस्त किया है। लेखक का तात्पर्य है कि **'नित्यपरमानन्द'** ही 'ब्रह्म' है। यहाँ स्पष्ट रूप से समझना चाहिए कि **'आनन्द'** का दो भेद माना गया है—**'परमानन्द'** और **'नित्यपरमानन्द'**। प्रथम अवस्था में साधक को, जो आनन्द कर्म करने के समय में प्राप्त होता है वह आनन्द स्थायी नहीं होता है क्योंकि बाह्य माया से आच्छादित रहता है। इसे ही **'परमानन्द'** कहते हैं। **'नित्यपरमानन्द'** में बाह्य माया का स्थान नहीं होता है। वह क्रमशः विभिन्न चक्रों में कुण्डलिनी का गमनागमन होने से **'शिवशक्ति'** अर्थात् **'नित्यपरमानन्द'** प्राप्त होता है। इसी **'नित्यपरमानन्द'** के प्राप्ति हेतु प्रस्तुत ग्रन्थ में समाविष्ट चक्रों के माध्यम से निम्नलिखित तथ्यों का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

समस्त प्राणियों में मनुष्य मात्र ही पूर्णता को प्राप्त कर सकता है। इसी तथ्य पर तान्त्रिक एवं योगिक प्रक्रिया के आधार पर प्रस्तुत ग्रन्थ में मानव शरीर का निगूढतत्त्व अत्यन्त निपुणता के साथ निरूपित किया गया है। कुण्डलिनी शक्ति मनुष्य मात्र के शरीर में सुप्त रहती है। यही परमेश्वर की **'चैतन्यरूपा'** शक्ति है। किन्तु जब तक यह सुप्तावस्था में रहती है तब तक मनुष्य पशुवत् होकर आत्मस्वरूप को खोकर विश्व में विचरण करते हैं। मनुष्य मात्र ही शिव रूप हैं, परन्तु शक्ति के जागृत होने पर ही शिवत्व की उपलब्धि होती है। इसी शक्ति का मूलधारचक्र में निवास स्थान है जो योगिक क्रिया के द्वारा ही जागृत किया जाता है। यही शक्ति सुषुम्णा मार्ग का अवलम्बन करके क्रमशः वज्रिणी तथा चित्रिणी नाड़ी को भेदन करती हुई ब्रह्मनाड़ी से ऊर्ध्वमुख होकर चलती है। इसके मार्ग में अनेक प्रदेशों में अनेक चक्रों की स्थिति है। कुण्डलिनीशक्ति जागृत होकर जिस समय जिस चक्र में प्रविष्ट होती है उसी समय उक्त चक्र से उन्मीलित होकर कार्यरत होती है तथा उक्त चक्र की शक्ति जागृत हो जाती है और योगी को शक्तिशाली बनाती है। उस समय योगी उस चक्र का ईश्वर बन जाता है। किन्तु योगी को चाहिए कि उस चक्र के वैभव में आत्मविभोर न होकर उसको पार करके उससे ऊपर उठे। उस चक्र में लिप्त रहने से पूर्ण शिवत्व की प्राप्ति सम्भव नहीं। ऐसा ही प्रत्येक चक्र में समझना चाहिए। नीचे के पाँच चक्र पाञ्चभौतिक तत्त्वों के तथा आज्ञाचक्र मन का अधिष्ठान है। इन छहों चक्रों का भेदन करने पर योगी पंचभूत तथा मन का नियामक अर्थात् ईश्वर बन जाता है। आज्ञाचक्र से ऊपर में जो बिन्दुस्थान है वहाँ से सहस्रदल कमल तक अति गुप्त मार्ग है। ज्ञानचक्र का उन्मीलन और दिव्यचक्षु का लाभ आज्ञाचक्र भेदन होने पर ही होता है किन्तु कुण्डलिनी का पूर्ण जागरण वहाँ भी नहीं होता है। जब कुण्डलिनी शक्ति पर भूमि अतिक्रमण करती हुई सहस्रदल में प्रवेश करती है तब उसी

समय शक्ति का जागरण पूर्ण रूप से होता है। मनीषिगण इस अवस्था को **योगावस्था** अथवा **सामरस्य** कहते हैं। इस प्रकार के मिलन से सुधारस का स्रवण होता है। जीव उस रस को पीकर सब दुःखों से मुक्त होकर धन्य हो जाता है अर्थात् 'ब्रह्म' तत्त्व को प्राप्त करके कृतकृत्य हो जाता है। इस प्रकार **नित्यपरमानन्द** की उपलब्धि के लिए षट्चक्र तथा उसकी प्रक्रिया ही मुख्य एवं महत्त्वपूर्ण उपाय है।

अन्त में, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान के निदेशक एवं अन्य पदाधिकारियों को इसके प्रकाशन स्वीकृति हेतु धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ। अपने विद्यापीठ के भू० पू० अध्यक्ष **डॉ० बाबूराम सक्सेना,** प्रकाशन एवं शोध समिति के सदस्य आचार्य प्रवर **प्रो० सरस्वती प्रसाद चतुर्वेदी, डॉ० आद्या प्रसाद मिश्र** एवं भू० पू० कार्यकारी प्राचार्य **डॉ० हरिहर झा** के प्रति मैं अपना आभार प्रकट करता हूँ जिन लोगों ने उक्त हस्तलेख के सम्पादन कार्य का गुरुतर भार मुझ पर सौंप कर उत्साहित एवं अनुगृहीत किया।

इसके अतिरिक्त मैं अपने मित्र **डॉ० किशोरनाथ झा** तथा **डॉ० जगन्नाथ पाठक जी** का अत्यन्त आभारी हूँ, जो मुझे समय-समय पर अपना अमूल्य समय देकर इस सम्पादन कार्य में सुझाव एवं सहायता आदि देकर इस गुरुतर कार्य को पूर्ण करने के लिए उत्साहित करते रहे।

कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय, दरभंगा के **'पञ्जी-प्रबन्ध'** विभाग के अध्यक्ष **पं० हरिनन्दन झा** एवं यू० जी० सी० गवेषक **डॉ० शशिनाथ झा जी** का हृदय से कृतज्ञ हूँ जिनके सत्प्रयास से मुझे चक्रकौमुदीकार **बदरीनाथ** की वंशावली एवं अन्य महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ प्राप्त हुईं।

मित्र प्रवर **डॉ० ब्रह्ममित्र अवस्थीजी** ने इस ग्रन्थ के सम्पादन भाषानुवाद में दुरूह स्थल तथा कतिपय क्लिष्ट एवं अस्पष्ट शब्दों की व्याख्या करके इस कार्य को पूर्ण करने में सहायता तथा सुझाव दिया है, अतएव उन्हें हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

अन्त में मित्रवर **डॉ० राघव चौधरी प्रसाद जी** को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने ग्रन्थ समाप्ति के समय में उपयुक्त सुझाव देने का कष्ट किया। साथ ही विद्यापीठ में शोधरत, विन्ध्य माँ के परम भक्त श्री प्रकाश पाण्डेय जी का हृदय से धन्यवाद देता हूं जिन्होंने मुझे ग्रन्थ में आगत चक्र आदि के निर्माण में अपना सत्परामर्श देकर कृतार्थ किया है।

सबसे महत्त्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय विषय यह है कि विद्यापीठ के समादरणीय प्राचार्य, **डॉ० गयाचरण त्रिपाठीजी** ने अपने गुरुतर प्राशासनिक भार रहते हुए

तथा अपने कार्यकाल की अल्पावधि में ही समस्त पाण्डुलिपि का अवलोकन कर ग्रन्थ को प्रकाशित करने की व्यवस्था की, अतएव उनके प्रति मैं हृदय से अत्यन्त आभारी हूँ।

प्रस्तुत सम्पादन कार्य कहाँ तक सफल हो सका है, इसका निर्णय तो सुधी पाठकगण ही करेंगे। पाठकगण से प्रार्थना करता हूँ कि समुचित सुझाव देकर अनुगृहीत करेंगे जिससे कि अगले संस्करण में उसका संशोधन एवं परिमार्जन करके पुनः प्रस्तुत कर सकूँ।

अन्त में, मैं श्री विष्णु आर्ट प्रेस, इलाहाबाद के अधिकारियों को धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ, जिन लोगों के अथक प्रयास से कम समय में यह संस्करण पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हो सका। इति शुभम्।

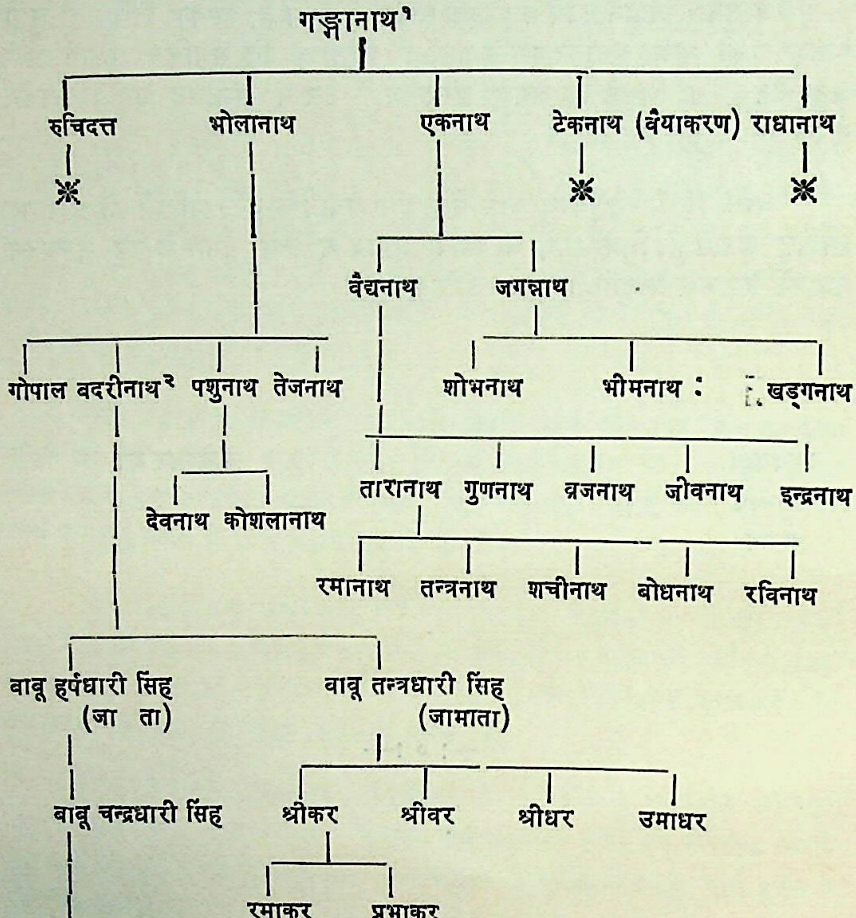
रामनवमी
५-४-७९
प्रयाग

जीवेश्वर झा

—:०:—

*'नरोनए पूरे' मूल के उजान ग्राम निवासी

'चक्रकौमुदीकार' श्रोत्रियमैथिल बदरीनाथ की वंशावली



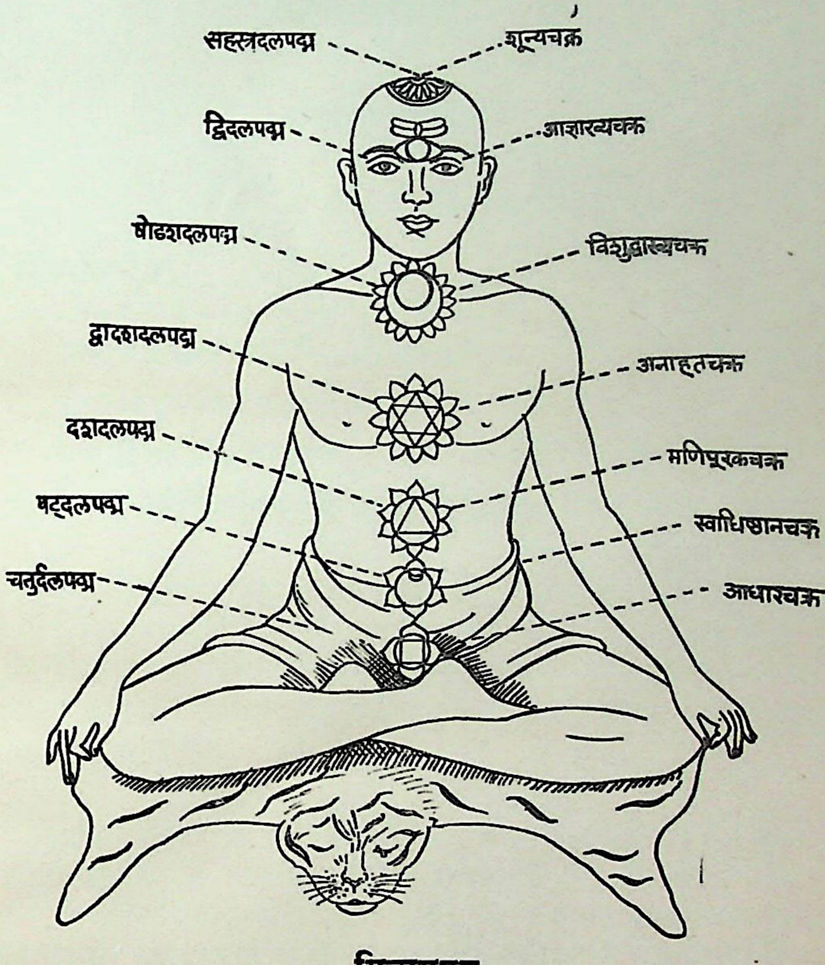
*प्रस्तुत कुलवृक्ष (वंशावली) पंडित श्री हरिनन्दन झाजी, श्रोत्रिय मैथिल ब्राह्मण पञ्जीप्रबन्ध विभाग, कामेश्वर सिंह दरभङ्गा संस्कृत विश्वविद्यालय, लक्ष्मीश्वर सिंह नगर, दरभंगा के सौजन्य से प्राप्त हुआ है।

१. म० म० डॉ० गङ्गानाथ झा जी से भिन्न हैं।

२. चक्रकौमुदीकार।

—०—

षट्चक्रमूर्त्तिः
(THE NATURE OF THE SIX PLEXUS)



सिद्धासनम्

चित्रसंख्या : १

बदरीनाथ-विरचिता

चक्रकौमुदी

[प्रथमः परिच्छेदः]

मङ्गलाचरणम्

नमः श्रीतारिण्यै ।

यन्मायावशवर्त्तिनो विदधते जीवानि मर्त्या तनुं [?]
द्वैतज्ञानमवाप्य कामवसिते घोरे भवे कामुकाः ।
दस्युक्रोधगणैर्विखिन्नहृदया दावाग्निसम्मर्द्दिता
नित्यानन्दचिदात्मकञ्च सकलं नेच्छन्ति यस्मिन् जगत् ॥१॥

जिस परब्रह्म माया के वशीभूत होकर कामुक लोग द्वैतज्ञान प्राप्त कर कामवासित घोर संसार में जीवरूपता एवं मरणशील शरीर (जीवन) को धारण करते हैं वे क्रोधगण डाकुओं के द्वारा प्रताडित अर्थात् दावाग्नि से विकल की तरह व्याकुल हृदयवाले, जिसमें (श्रीकृष्ण में) नित्यानन्द चिदात्मक सकल जगत की कामना नहीं करते हैं।

[यद्यपि उपरोक्त इस श्लोक में परब्रह्म शब्द का उल्लेख नहीं है, फिर भी पूर्वापर अनुशीलन से प्रतीत होता है कि ग्रन्थकार के अनुसार श्रीकृष्ण को नित्यानन्द चिदात्मक परब्रह्म स्वीकारा गया है। जो कि समस्त जगत के आधार भूत हैं। इस तरह ग्रन्थकार के मत में श्रीकृष्ण अद्वैत सिद्धान्त के अनुसार स्वीकृत परब्रह्म ही हैं। यद्यपि माया के वशीभूत, जन्ममरणशील द्वैतभावना से वासित संसार, पीडा से व्याकुल लोग उस नित्यानन्द चिदात्मक (श्रीकृष्ण) परब्रह्म को समस्त जगत का आधारभूत होना स्वीकार नहीं करते हैं लेकिन वस्तुतः श्रीकृष्ण ही परब्रह्म हैं।]

तं श्रीकृष्णमुदारबुद्धिममलं प्रध्वंसनं कर्मणां
चिन्मात्रञ्च परं निधाय हृदये शिक्षादिसत्संग्रहान् ।
आलोक्यागमसाङ्ख्ययोगनिगमान् संयत्नतो धीमता
सैषा श्रीमिथिलोद्भवेन **बदरीनाथेन** विद्वन्मुदे ॥२॥

उस उदार बुद्धि निर्मल कर्म के विध्वंसकारी चिन्मात्र श्रीकृष्ण को हृदय में धारण करके शिक्षा आदि सद्ग्रन्थों के संग्रह को देखकर सांख्य, योग, आगम और निगम आदि का भी यत्नपूर्वक आलोड़न करके मेधावी मैथिल पण्डित बदरीनाथ द्वारा विद्वानों की प्रसन्नता के लिए इस चक्रकौमुदी की रचना की जा रही है ।

प्रतापोन्नतराजस्य महाराजस्य भूपतेः ।
श्रीलक्ष्मीश्वरसिंहस्य नयता मुदमादरात् ॥३॥

यह चक्रकौमुदी परम प्रतापी अर्थात् उन्नत या समृद्ध राज्य वाले महाराजा लक्ष्मीश्वर सिंह के समक्ष आदरपूर्वक उपस्थित की जाती हुई उनकी प्रसन्नता का कारण बने ।

उमाविराजिततनोश्चन्द्रशेखर धीरतेः [?] ।
श्रुतिसिद्धिवचो धृत्वा क्रियते **चक्रकौमुदी** ॥४॥

उमा से विराजित शरीर वाले (अतएव अर्द्धनारीश्वर) चन्द्रशेखर (शिव) के सदृश उमा से युक्त चन्द्रशेखर नाम वाले परम मनीषी के श्रुतिसिद्ध वचनों को हृदय में धारण करके (अर्थात् परमगुरु चन्द्रशेखर के वचनों के अनुसार ही) चक्रकौमुदी की रचना की जा रही है ।

———

[मूलाधारचक्रम्]

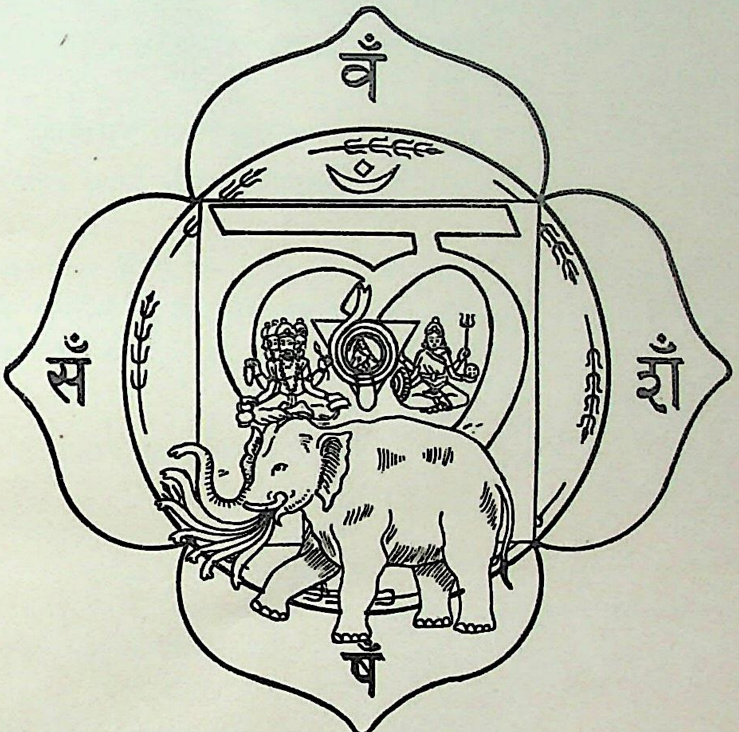
•

अथ वक्ष्ये मूलचक्रं मूलप्रकृतिसंयुतम् ।
यस्य विज्ञानमात्रेण जीवन्मुक्तो भवेन्नरः ॥५॥

सर्व प्रथम मैं मूल प्रकृति से युक्त मूलाधार चक्र का वर्णन करूँगा जिसके ज्ञान मात्र से मनुष्य का जीवन मुक्त हो जाता है ।

मूलाधारचक्रम्
(PELVIC PLEXUS)

चतुर्द्दलपद्म



चित्रसंख्या : २

गुदलिङ्गान्तरे पद्मं चतुर्द्दलसमन्वितम् ।[1]
चतुर्द्दलेषु स्वर्णाभान् वा दिसान्तान् स्मरेत्सुधीः ॥६॥

गुदा एवं लिङ्ग के मध्य चार दलों से युक्त पद्म विराजमान है, उसके चार दलों में स्वर्ण सदृश चारों दिक् भागों का साधक स्मरण करे ।

क्षितेर्मण्डलमत्रैव पीताभं ऋतुकोणकम् ।
चतुष्कोणेषु वज्राद्यं लं बीजं तत्र भावयेत् ॥७॥

इस पर ही ऋतु (अर्थात् ६ कोणों वाला) पीत कान्ति युक्त क्षिति मण्डल है, इसके चार कोणों में वज्रादि लं वीज की भावना करे ।

क्षितिरूपं गजारूढं स्वर्णाभं वेदबाहुकम् ।[2]
तत्र ध्यायेच्चतुर्बाहुं ब्रह्माणं साक्षसूत्रकम् ॥८॥

वहीं पर पृथ्वी के रूप में हाथी (ऐरावत) पर बैठे हुए स्वर्णिम कान्ति सम्पन्न चारो हाथों में वेद लिए हुए चतुर्भुज अक्ष और सूत्र (माला) से युक्त ब्रह्मा का ध्यान करे ।

तुलनीयः—१. अथाधारपद्मं सुषुम्णास्यलग्नं
ध्वजाधो गुदोर्द्ध्वं चतुःशोणपत्रम् ।
अधोवक्त्रमुद्यत्सुवर्णाभवर्णै—
र्वकारादिसान्तैर्युतं वेदवर्णैः ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, आधारचक्रम्, श्लोक ५]

अमुष्मिन् धरायाश्चतुष्कोणचक्रं
समुद्भासिशूलाष्टकैरावृतं तत् ।
लसत्पीतवर्णं तडित्कोमलाङ्गं
तदङ्के समास्ते धरायाः स्वबीजम् ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, आधारचक्रम्, श्लोक ६]

२. चतुर्बाहुभूषं गजेन्द्राधिरूढं
तदङ्के नवीनार्कतुल्यप्रकाशः ।
शिशुः सृष्टिकारी लसद्वेदबाहु—
र्मुखाम्भोजलक्ष्मीश्चतुर्भागभेदः ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, आधारचक्रम्, श्लोक ७]

दधानं पङ्कजं दिव्यं कमण्डलुमनुत्तमम् ।[1]
तद्वामे डाकिनी शक्तिर्ध्येया सूर्यसमप्रभा ॥९॥

जो कि दिव्य कमल एवं अत्यन्त उत्तम कमण्डलु को धारण किए हुए हैं, उनके बाएँ भाग में सूर्य के सदृश कान्ति वाली डाकिनी शक्ति का ध्यान करे।

चतुर्भुजा साक्षसूत्रनीरपात्रयुताम्बिका ।
मूलचक्रस्थिता नित्या ध्यानाद्योगप्रदर्शनी ॥१०॥

चार भुजाओं वाली अक्षसूत्र (माला) और जलपात्र (कमण्डलु) से युक्त मूलचक्र पर स्थित अम्बिका का नित्य ध्यान करने से वह देवी योग विद्या का साक्षात् प्रदर्शन करती है।

कर्णिकायामूर्ध्वकोणं त्रिकोणमतिसुन्दरम् ।[2]
ऊर्ध्वकोणे सुषुम्णाख्या वामदक्षिणयोः क्रमात् ॥११॥
इडाख्या पिङ्गलाख्या हि वीणातन्तुवदास्थिता ।
इडा तु चन्द्रनाडी स्यात् पिङ्गला सूर्यनाडिका ॥१२॥

उस मूलाधार चक्र के चतुर्दल कमल की कर्णिका में अत्यन्त सुन्दर ऊर्ध्व-कोण त्रिकोण है, उसके ऊर्ध्व कोण में सुषुम्णा तथा वायीं एवं दायीं क्रमशः इडा और पिङ्गला नाम की नाड़ियाँ वीणा तन्तु की तरह [सूक्ष्म] स्थित है। इनमें से इडा को चन्द्रनाड़ी तथा पिङ्गला को सूर्यनाड़ी भी कहते हैं।

तुलनीयः—१. वसेदत्र देवी च डाकिन्यभिख्या
लसद्वेदबाहूज्ज्वला रक्तनेत्रा ।
समानोदितानेकसूर्यप्रकाशा
प्रकाशं वहन्ती सदा शुद्धबुद्धेः ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, आधारचक्रम्, श्लोक ८]

२. वज्राख्या वक्त्रदेशे विलसति सततं कर्णिकामध्यसंस्थं
कोणं तत् त्रैपुराख्यं तडिदिव विलसत् कोमलं कामरूपम् ।
कन्दर्पो नाम वायुर्निवसति सततं तस्य मध्ये समन्तात्
जीवेशो बन्धुजीवप्रकरमभिहसन् कोटिसूर्यप्रकाशः ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः आधारचक्रम्, श्लोक ९]

अनिलेन्द्वर्करूपा हि सुषुम्णा परिकीर्त्तिता ।
सुषुम्णान्तर्गता ध्येया चित्रिणी ब्रह्मनाडिका ॥१३॥

सुषुम्णा का स्वरूप अग्नि, चन्द्र तथा सूर्य के सदृश कहा गया है, सुषुम्णा के अन्तर्गत ही चित्र वर्णों वाली ब्रह्मनाड़ी है, जिसका ध्यान करना चाहिए।

ब्रह्मरन्ध्रं विदुस्तस्यां कुण्डलीगमनायनम् ।
सार्द्धत्रिकोट्यो नाड्यस्तु मूलचक्रोत्थिताः स्मृताः ॥१४॥

उसमें ही योगी लोग ब्रह्मरन्ध्र है, ऐसा जानते हैं। इस ब्रह्मरन्ध्र में कुण्डली के गमन का स्थान है। मूलचक्र से ऊपर निकली हुई साढ़े तीन करोड़ (कोटि) नाड़ियाँ हैं।

तासु प्रधाना दश च पिङ्गलेडा सुषुम्णिका ।
गान्धारी हस्तिजिह्वाख्या सुपूषाऽलम्बुषास्तथा ॥१५॥

उनमें दश प्रधान नाड़ियाँ है, जिनके नाम निम्नलिखित हैं—१. पिङ्गला २. इडा ३. सुषुम्णा ४. गान्धारी ५. हस्तिजिह्वा ६. सुपूषा ७. अलम्बुषा,

यशस्विनी शङ्खिनी च कुहूस्तत्र व्यवस्थिता ।
सव्ये नेत्रे च गान्धारी हस्तिजिह्वा तु दक्षिणे ॥१६॥

८. यशस्विनी ९. शङ्खिनी १०. कुहू। इन नाड़ियों में से गान्धारी बायें नेत्र तथा हस्तिजिह्वा दायें नेत्र से संयुक्त है।

यशस्विनी वामकर्णे सुपूषा दक्षकर्णके ।
मुखे चालम्बुषा ज्ञेया कुहूर्ल्लिङ्गे व्यवस्थिताः ॥१७॥

इसी प्रकार बायें कान में यशस्विनी, दाहिने कान में सुपूषा, मुख में अलम्बुषा और लिङ्ग में कुहू व्यवस्थित है।

शङ्खिनी मूलदेशे तु देहं व्याप्यापराः स्थिताः ।
तासाम्प्रयोजनाभावादत्र व्याख्या कृता नहि ॥१८॥

शङ्खिनी नाड़ी मूलदेश में स्थित है तथा शेष नाड़ियाँ सम्पूर्ण शरीर में फैली हुई हैं। प्रयोजन के अभाव से यहाँ उनकी व्याख्या नहीं की जा रही है।

ऊर्ध्वकोणे लिङ्गरूपं दाडिमीपुष्पसन्निभम् ।[1]
स्वयम्भूलिङ्गमाहुस्तत् केचित्तान्त्रिकसत्तमाः ॥१९॥

पूर्वोक्त त्रिकोण के ऊर्ध्वकोण में अनार के फूल के सदृश एक लिङ्ग की आकृति विद्यमान है जिसे तान्त्रिक श्रेष्ठ विद्वान लोग स्वयम्भू-लिङ्ग कहते हैं।

दशेन्द्रियमनोबुद्धिपञ्चप्राणसमन्वितम् ।
अपञ्चीकृतभूतोत्थं लिङ्गदेहमुदाहृतम् ॥२०॥

यह लिङ्ग दश इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि और पाँच प्राणों से युक्त है। इसका निर्माण अपञ्चीकृत (शुद्ध) पंचभूतों से हुआ है, इसे ही लिङ्ग-देह कहा जाता है।

अनेन वासनायुक्तो जीवो देहान्तरं व्रजेत् ।
जीवस्य वासनानाशे लिङ्गनाशो भवेद् ध्रुवम् ॥२१॥

यह लिङ्ग शरीर में वासनाओं से युक्त होकर देह (शरीर) देहान्तर (अर्थात् विभिन्न शरीरों) को प्राप्त करता है, जीव की वासनाओं का नाश हो जाने पर लिङ्ग का भी नाश निश्चित हो जाता है।

सार्द्धत्रिवलयाकारा सुप्ताहिसदृशाकृतिः ।[2]
प्रकृतिः कुण्डली नित्या लिङ्गमाश्रित्य संस्थिता ॥२२॥

इस लिङ्ग के आश्रित ही सोये हुए साँप की आकृति वाली साढ़े तीन वलयों से युक्त कुण्डली विद्यमान है। यह कुण्डली नित्य है और इसे ही प्रकृति भी कहते हैं।

तुलनीयः—१. तन्मध्ये लिङ्गरूपी द्रुतकनककलाकोमलः पश्चिमास्यो
ज्ञानध्यानप्रकाशः प्रथमकिसलयाकाररूपः स्वयम्भूः ।
विद्युत्पूर्णेन्दुबिम्बप्रकरचयस्निग्धसन्तानहासी
काशीवासी विलासी विलसति सरिदावर्तरूपप्रकारः ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, आधारचक्रम्, श्लोक १०]

तुलनीयः—२. तस्योर्ध्वे विसतन्तुसोदरलसत्सूक्ष्मा जगन्मोहिनी
ब्रह्मद्वारमुखं मुखेन मधुरं सञ्छादयन्ती स्वयम् ।
शङ्खावर्त्तनिभा नवीनचपलामालाविलासास्पदा
सुप्ता सर्पसमा शिवोपरिलसत्सार्द्धत्रिवृत्ताकृतिः ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, आधारचक्रम्, श्लोक ११]

तमोरजस्सत्त्वसाम्यावस्थेयं चित्कला स्मृता ।
अर्द्धांशब्रह्मसंश्लिष्टा मूलप्रकृतिरीश्वरी ।।२३।।

यह प्रकृति कुण्डली जब तम, रजस, तथा सत्त्व की साम्य अवस्था से युक्त होती है तब इसे चित्कला कहते हैं। इसके अर्द्धांश में ब्रह्म का संश्लेष होने पर यह मूल प्रकृति ईश्वरी कहलाती है।

सत्त्वादित्रिकरूपं हि वलयत्रयमीरितम् ।
ब्रह्मपुच्छमिदं यद्वदर्द्धं [?] ब्रह्मांश उच्यते ।।२४।।

उसमें जो तीन वलय दिखाई पड़ते हैं वे एक एक सत्त्व, रजस और तमस रूप हैं और वलय रूप ऊपर को उठा हुआ अंश ब्रह्मपुच्छ और ब्रह्मांश कहा जाता है।

काव्यादिवाचो जगतां श्वासोच्छ्वासविभञ्जनैः ।[1]
कूजन्ति कुण्डलीशक्तिर्यया जीवो हि धार्यते ।।२५।।

विश्व की प्राणियों के श्वास-उच्छ्वास से प्रकट होने वाली काव्य आदि वाणियाँ उस कुण्डली शक्ति का ही वर्णन करती है। इस कुण्डली शक्ति से ही जीव का धारण किया जाता है।

मूलाधारोत्थिता विद्या पञ्चाशद्वर्णरूपिणी ।
चैतन्यं यच्च भूतानां शब्दब्रह्म तदुच्यते ।।२६।।

मूल आधार से उठी हुई विद्या जो कि पचास वर्णों वाली है तथा जो समस्त भूतों का चैतन्य है, उसे शब्दब्रह्म कहते हैं।

तत्प्राप्य कुण्डलीरूपं प्राणिनां मूलचक्रगम् ।
वर्णात्मनाऽविर्भवति गद्यपद्यादिभेदतः ।।२७।।

समस्त प्राणियों के मूलचक्र में विद्यमान कुण्डली रूप शब्दब्रह्म को प्राप्त करके वर्णों के रूप में प्रगट होता है। गद्य और पद्य इसके ही भेद हैं।

तुलनीयः—१. कूजन्ती कुलकुण्डली च मधुरं मत्तालिमालास्फुटं
वाचः कोमलकाव्यबन्धरचनाभेदातिभेदक्रमैः ।
श्वासोच्छ्वासविभञ्जनेन जगतां जीवो यया धार्यते
सा मूलाम्बुजगह्वरे विलसति प्रोद्दामदीप्त्यावलिः ।।
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, आधारचक्रम्, श्लोक १२]

परिस्फुरति सर्वात्मा हंसमात्मानमाश्रिताः ।
हंसः प्राणाश्रयो नित्यं प्राणो नाडीपथाश्रयः ॥२८॥

ये गद्यपद्य आदि भेद सर्वात्मना हंस रूप आत्मा पर आश्रित होकर प्रगट होते हैं। यह आत्मा हंस प्राण के आश्रित है और यह प्राण नाड़ी पथ के आश्रित है।

आधारादुद्गतो वायुर्यथावत्सर्वदेहिनां ।
देहं व्याप्य सुनाडीभिः प्रयाणं कुरुते बहिः ॥ २९॥

(मूल) आधार से उठा हुआ वायु सभी प्राणियों के देह में यथावत्त व्यापक होकर शुभ नाड़ियों के माध्यम से प्रयाण करता है।

द्वादशाङ्गुलमानेन तस्मात् प्राण इतीरितः ।
पुम्प्रकृत्यात्मकौ प्रोक्तौ बिन्दुसर्गौ मनीषिभिः ॥३०॥

क्योंकि इसका मान अर्थात् प्रमाण द्वादश अङ्गुल है अतः इसे प्राण कहा जाता है। मनीषि लोग विन्दु और सर्ग को पुरुष और प्रकृति के रूप में बतलाते हैं।

हंसौ तौ पुम्प्रकृत्याख्यौ हम्पुमान् प्रकृतिस्तु सः ।
अजपा कथिता ताभ्यां जीवो यामुपतिष्ठते ॥३१॥

पुरुष और प्रकृति रूप हंसों में (हम् पुरुष का वाचक है तथा सः प्रकृति का) इस प्रकार हंस पद पुरुष और प्रकृति दोनों का वाचक होता है। जीव जिसे प्राप्त करता है उसे हंस (अजपा) कहते हैं।

हंकारेण बहिर्याति सःकारेण विशेत्पुनः ।
हंसमित्यक्षरं नित्यं जीवो जपति सर्वदा ॥३२॥

जीव हं इस एक अक्षर का नित्य जप करे। इस जप के अवसर पर हंकार के साथ प्राण को बाहर निकाले और सः कार के द्वारा पुनः प्राण को प्रवेश कराये।

पुरुषस्याश्रयं गत्वा प्रकृतिर्नित्यमात्मनः ।
यदा तद्भावमाप्नोति तदा सोऽहमियम्भवेत् ॥३३॥

जब प्रकृति पुरुष का आश्रय प्राप्त करके स्वयं को तद् रूप बना देती है अर्थात् पुरुष के आश्रय से प्रकृति पुरुष रूप हो जाती है, उस समय यह सोहं स्थिति हुआ करती है ।

सकारार्णं हकारार्णं लोपयित्वा ततः परम् ।
सन्धिं कुर्यात् पूर्वरूपं तदाऽसौ प्रणवो भवेत् ॥३४॥

इस सोहं पद में सकार एवं हकार का लोप करके यदि पूर्व रूप सन्धि कर दी जाय तो (सोहम् = ओ अम् = ओऽम्) ओंकार रूप प्रणव बन जाता है ।

ॐ मित्येकाक्षरब्रह्म शब्दब्रह्मेति मे मतिः ।
एकमेकाक्षरब्रह्म स्थानभेदादनेकधा ॥३५॥

यह ओं एकाक्षर ब्रह्मशब्द ब्रह्म है, ऐसी मेरी धारणा है । यह एक एकाक्षर ब्रह्म स्थान भेद से अनेक प्रकार का हो जाता है ।

एकविंशसहस्रञ्च षट्शताधिकमेव तु ।
अजपा नाम मन्त्रन्तु जीवो जपति नित्यशः ॥३६॥

इसी प्रणव को यदि इक्कीस हजार छः सौ बार जपा जाय तो अजपा मन्त्र निष्पन्न होता है, जीव जिसका जप करता है ।

साधकः प्रातरुत्थायाजपाजपं समर्पयेत् ।
सशक्तिकगणेशाय मूलाधारस्थिताय च ॥३७॥
समर्पयेत् षट्शतन्तु स्वाधिष्ठाने स्थिताय च ।
सावित्रीब्रह्मणे चैव षट्सहस्रं समर्पयेत् ॥३८॥

साधक व्यक्ति प्रातःकाल उठकर अजपा जप समर्पित करे । इस पूर्वोक्त अजपा जप में ६ सौ मन्त्रों का मूलाधारचक्र में स्थित शक्ति और गणेश को समर्पित करे तथा स्वाधिष्ठानचक्र में स्थितस ावित्री — ब्रह्मा को ६ हजार मन्त्रों का समर्पण करे ।

मणिपूरे षट्सहस्रं लक्ष्मीनारायणाय च ।
अनाहते षट्सहस्रमुमामहेश्वराय च ॥३९॥

मणिपूर चक्र में स्थित लक्ष्मीनारायण को छः हजार तथा अनाहतचक्र में स्थित उमा-महेश्वर को छः हजार मन्त्रों का समर्पण करे ।

जीवात्मने सहस्रन्तु प्राणशक्तियुताय च ।
समर्पयेद्विशुद्धाख्य आज्ञाचक्रे परात्मने ॥४०॥
पराशक्तियुतायेव सहस्रन्तु समर्पयेत् ।
सहस्रन्तु सहस्रारे गुरवे तं समर्पयेत् ॥४१॥

प्राण और शक्ति से युक्त जीवात्मा को एक हजार तथा आज्ञाचक्र में स्थित पराशक्ति से युक्त विशुद्ध संज्ञा वाले परमात्मा को एक हजार मन्त्रों का समर्पण करे एवं सहस्रारचक्र में स्थित गुरू को सहस्र (हजार) मन्त्रों का समर्पण करे ।

प्राणादिवायवो ये च सन्तीह दशसंख्यका: ।
तेषां स्थानानि नामानि कथ्यन्ते क्रमशः स्फुटम् ॥४२॥

अग्रिम पद्यों में प्राण आदि दश वायुओं (दश प्राणों) के क्रमशः स्थान और नाम वताये जा रहे हैं ।

नासाग्रवर्त्ती प्राणाख्यस्त्वपानोऽधो व्यवस्थितः ।
समानो मध्यदेहस्थोऽशितान्नादिसमीकरः ॥४॥

नासिका के अग्रभाग में स्थित वायु को 'प्राण' कहा जाता है तथा अधोभाग में (मलद्वार में) व्यवस्थित वायु को 'अपान' कहते हैं । उदर में स्थित खाये हुए अन्न आदि का पाचन करने वाला वायु 'समान' कहलाता है ।

उदानः कण्ठदेशस्थ ऊर्ध्वगामी स्फुरत्यसौ ।
सम्पूर्णदेहकर्त्ती स्यात् व्यानो नाम प्रचारकः ॥४४॥

ऊर्ध्वगामी तथा कण्ठदेश में स्थित वायु को 'उदान' कहते हैं एवं सम्पूर्ण देह में व्याप्त होकर उसके संचार में हेतु वायु को 'व्यान' कहते हैं ।

नाग उद्गीरणे प्रोक्तः कूर्म्म उन्मीलने मतः ।
कृकरः क्षुत आख्यातो देवदत्तो विजृम्भणे ।।४५।।

जिस वायु से उद्गीरण अर्थात् सम्भाषण करते हैं उसे 'नाग' कहा जाता है । आँखों के उन्मीलन-निमीलन का हेतु वायु 'कूर्म' कहलाता है । क्षुधा का हेतु वायु 'कृकर' (कृकल ?) कहलाता है तथा जम्भाइ में कारणभूत वायु देवदत्त कहलाता है ।

सर्वव्यापी पोषणे च धनञ्जय इति स्मृतः ।
वह्नयोऽत्र दशप्रोक्तास्तत्तत्स्थानसमाश्रिताः ।।४६।।

सम्पूर्ण शरीर में व्यापक तथा पोषण के हेतु वायु को 'धनञ्जय' कहते हैं । अग्रिम पंक्तियों में दश अग्निओं का तथा उन स्थानों का वर्णन किया जायगा जहाँ वे अग्नियाँ स्थित हैं ।

त्वचि भ्राजकनामाग्नी रञ्जकोऽसृजि संस्थितः ।
मांसे क्लेदकनामाग्निर्मेदसि स्नेहकः स्मृतः ।।४७।।

त्वचा में 'भ्राजक' नाम की अग्नि स्थित रहती है तथा 'रञ्जक' नाम की अग्नि खून में स्थित है, मांस में रहने वाली अग्नि 'क्लेदक' तथा मेद (चर्वी) में रहने वाली अग्नि 'स्नेहक' कहलाती है ।

धावकोऽस्थिस्मृतो वह्निर्मज्जायां बन्धकः स्मृतः ।
शुक्रे द्रावकनामाग्निर्वाते व्यापक उच्यते ।।४८।।

हड्डी में स्थित अग्नि को 'धावक', मज्जा में स्थित अग्नि को 'बन्धक', शुक्र (वीर्य) में स्थित अग्नि को 'द्रावक' तथा वात में स्थित अग्नि को 'व्यापक' कहते हैं ।

पित्ते पावकनामाग्निः कफे श्लेष्मक उच्यते ।
वह्नयो दोषदूष्येषु संलीना दशदेहिनः ।।४९।।

पित्त में स्थित अग्नि को 'पावक' तथा कफ में स्थित अग्नि को 'श्लेष्मक' कहते हैं । इस प्रकार तीन दोषों (वात, पित्त, कफ) तथा सात दूष्य (धातुओं) में ये दश अग्नियाँ लीन रहती हैं ।

वातपित्तकफा दोषा दूष्याः स्युः सप्तधातवः ।
त्वगसृक्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्राणि धातवः ॥५०॥

वात, पित्त और कफ इन्हें दोष कहा जाता है तथा त्वचा, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र ये सात धातुएँ हैं ।

ध्वन्यात्मकानां वर्णानामुत्पत्तिक्रम उच्यते ।
आत्मा बुद्धचा समेत्यार्थान् मनोयुङ्क्ते विवक्षया ॥५१॥
मनः कायाग्निमाहन्ति स प्रेरयति मारुतम् ।
स मारुतः कुण्डलिन्या च वलुवसित क्रमात्[?] ॥५२॥

अग्रिम पंक्तियों में ध्वन्यात्मक वर्णों की उत्पत्ति का क्रम कहा जा रहा है । आत्मा बुद्धि की सहायता से अर्थों को एकत्र कर बोलने की इच्छा से मन को प्रेरित करता है । मन शरीराग्नि को और वह वायु को प्रेरित करता है तथा वह वायु कुण्डलिनी से होता हुआ उरः स्थल में प्राप्त होता है ।

सोदीर्णोमूर्ध्न्यभिहतो वर्णान् जनयति ध्वनीन् ।
ध्वन्यात्मकाश्च ये वर्णा व्यञ्जकास्ते प्रकीर्तिताः ॥५३॥

उठा हुआ वह वायु मूर्धा में अभिहित होकर (टकराकर) वर्णध्वनियों को उत्पन्न करता है । जो वर्ण ध्वन्यात्मक हैं वे व्यञ्जक कहे जाते हैं ।

तद्व्यङ्ग्या निर्विकाराश्च बोधका अचलाः स्मृता ।
ते ब्रह्मरूपा विज्ञेया सर्वोपाधिविवर्जिता ॥५४॥

उन वर्णों द्वारा व्यङ्ग्य निर्विकार अर्थबोधक अक्षर (अचल) माने जाते हैं । वे सभी उपाधियों से रहित ब्रह्मरूप हैं, ऐसा समझना चाहिए ।

यथा व्यजनघातेन वायोः प्रत्यक्षता त्वचा ।
सर्वत्र व्याप्य वर्णानां व्यञ्जकात् स्फुटता तथा ॥५५॥

जिस प्रकार व्यजन (पंखा) के आघात से वायु का त्वचा द्वारा प्रत्यक्ष हो जाता है उसी प्रकार सर्वत्र व्यापक वर्णरूप शब्दब्रह्म की व्यञ्जक ध्वनियों से स्फुट प्रतीत होती है ।

सुषुम्णारन्ध्रतो वर्णाः कण्ठादिकरणैः क्रमात् ।
आविर्भवन्ति ते नित्यं बैखरीसृष्टिमागताः ॥५६॥

ये वर्ण सुषुम्णा रन्ध्र से क्रमशः कण्ठ आदि करणों (साधनों) द्वारा प्रगट होते हैं । इस प्रकार वे बैखरी सृष्टि को प्राप्त होते हैं ।

अष्टौ स्थानानि वर्णानामुरः कण्ठः शिरस्तथा ।
जिह्वामूलञ्च दन्तश्च नासिकोष्ठौ च तालुकः ॥५७॥

वर्णों के उच्चारण के आठ निम्नलिखित स्थान हैं—१. उरस २. कण्ठ ३. शिर (मूर्धा) ४. जिह्वामूल ५. दन्त ६. नासिका ७. ओष्ठ ८. तालु ।

अकारादिविसर्गान्ता स्वराः षोडशशक्तयः ।
ककारादिक्षकारान्ता वर्णास्ते शिवरूपिणः ॥५८॥

वर्णों में 'अ' से लेकर 'विसर्ग' पर्यन्त सोलह स्वरों को शक्ति तथा 'क' से 'क्ष' पर्यन्त वर्णों को शिवरूप माना जाता है ।

व्यञ्जनत्वात् सदानन्दा [अनन्ता ?] अत उच्चारणं नहि ।
उच्चरेत् स्वरसंयुक्तान् कादिवर्णान् शिवात्मकान् ॥५९॥

क्योंकि शिव स्वरूप 'क' आदि ध्वनियाँ व्यञ्जन अर्थात् शब्दब्रह्म की सदा व्यञ्जना कराने वाले तथा अनन्त हैं । अतः उनका उच्चारण सम्भव नहीं है, इसलिए इनका स्वर सहित अर्थात् शक्ति सहित ही उच्चारण करे ।

अकारादिविसर्गान्ताः स्वराः षोडशसंख्यकाः ।
ककारादिमकारान्ताः स्पर्शा विंशतिपञ्चकाः ॥६०॥

'अ' से लेकर विसर्ग पर्यन्त सोलह वर्णों को स्वर कहा जाता है तथा 'क' से लेकर 'म' पर्यन्त पच्चीस वर्णों को स्पर्श वर्ण कहा जाता है ।

यकारादिक्षकारान्ता व्यापका दशसंख्यकाः ।
एकपञ्चाशदर्णाश्च सोमसूर्याग्निदेवताः ॥६१॥

'य' से लेकर 'क्ष' पर्यन्त शेष दश वर्ण व्यापक वर्ण हैं । उपर्युक्त इक्यावन वर्णों के सोम, सूर्य आदि देवता हैं ।

भ्रूमध्यस्थितचक्रस्य पत्र[पद्म ?]द्वयमुदाहृतम् ।
हक्षाद्यममृतस्त्रावि लात्मिका कर्णिका यतः ॥६२॥

भ्रू मध्य में स्थित चक्र के दो पत्र (पद्म ?) कहे जाते हैं । जिनके आरम्भ में 'ह' तथा 'क्ष' वर्ण स्थित हैं । ये पत्रद्वय अमृतस्त्रावी अर्थात् अमृत का स्त्राव करने वाले हैं । इनकी कर्णिका 'ल' रूप है ।

अतोऽन्तर्मातृकादौ तु ज्ञेयाः पञ्चाशदक्षराः ।
वर्णन्यासाक्षमालादावेकपञ्चाशदक्षराः ॥६३॥

अतएव अन्तर्मात्रिका इत्यादि में पचास अक्षर है, ऐसा समझना चाहिए किन्तु वर्णन्यास तथा अक्षमाला आदि में इक्यावन अक्षर माने जाते हैं ।

अथ वक्ष्ये च भूतानां शुद्धिज्ञानाप्तये नृणाम् ।
भूतशुद्धिप्रकारास्तु बहवः शिवभाषिताः ॥६४॥

अब अग्रिम पंक्तियों में भूतों की शुद्धि (भूतशुद्धि) और मनुष्यों को ज्ञान प्राप्ति के लिए भूतशुद्धि के शिव द्वारा बताए गये बहुत से प्रकार कहे जाएँगे ।

तेषां मध्ये शिवोक्तं वै प्रकारद्वयमुच्यते ।
ब्रह्मणः प्रकृतिर्भाव्यां ततोऽन्तःकरणात्मकम् ॥६५॥
महत्तत्त्वं ततो जातोऽहङ्कारस्त्रिविधः क्रमात् ।
सात्त्विकादप्यहङ्काराद्देवा वैकारिका दश ॥६६॥

शिव भाषित भूतशुद्धि के अनेक उपायों में से दो प्रकार नीचे बताए जा रहे हैं । सबके मूल में ब्रह्म की भाव्य प्रकृति है, उससे अन्तःकरण रूप महत्तत्त्व उत्पन्न होता है । महत् तत्त्व से तीन प्रकार का (सात्त्विक, राजस और तामस) अहंकार उत्पन्न होता है तथा सात्त्विक अहंकार से निम्नलिखित दश वैकारिक देव उत्पन्न होते हैं ।

दिग्वातार्कप्रचेतोऽश्विवह्नीन्द्रोपेन्द्रमित्रकाः ।
तैजसादिन्द्रियाण्यासन् तन्मात्राक्रमयोगतः ॥६७॥

१. दिशा २. वायु ३. अर्क (सूर्य) ४. प्रचेतस् (वरुण या जल) ५-६. दो अश्विव ७. अग्नि ८. इन्द्र ९. उपेन्द्र १०. मित्र । इसी प्रकार तैजस (राजस) अहंकार से तन्मात्राओं के क्रम सम्बन्ध से इन्द्रियाँ उत्पन्न होती हैं ।

तामसादप्यहङ्कारात् पञ्चभूतानि जज्ञिरे ।
वायुराकाशतो जातो वायोरग्निस्ततो जलम् ॥६८॥
अद्भ्यः पृथ्वीति सञ्जातेत्येवं सञ्चिन्त्य साधकः ।
विलाप्य पृथिवीमप्स्व[पश्चा ?]ग्नौ मारुतेऽनलम् ॥६९॥
आकाशे मारुतं विद्यादहङ्कारेऽन्तरीक्षकम् ।
अहङ्कारं महत्तत्त्वे प्रकृतौ तद्विलापयेत् ॥७०॥

इसी प्रकार तामस अहंकार से निम्नलिखित पाँच भूत उत्पन्न होते हैं— आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथ्वी उत्पन्न होती है। इस प्रकार समझकर साधक पृथ्वी को जल में, जल को अग्नि में, अग्नि को वायु में, वायु को आकाश में, अन्तरिक्ष अर्थात् आकाश को अहंकार में, अहंकार को महत् तत्त्व में और महत् तत्त्व को पृथ्वी में विलीन करे।

प्रकृतिं ब्रह्मणि तथा वै[वि ?]लाप्यैवं विचिन्तयेत् ।
अथ चान्यप्रकारेण भूतशुद्धिर्निगद्यते ॥७१॥

इसी प्रकार प्रकृति का ब्रह्म में विलय करके उसका चिन्तन करे। अग्रिम पंक्तियों में एक अन्य प्रकार से भी भूतशुद्धि का कथन किया जा रहा है।

सुषुम्णारन्ध्रमार्गेण कूर्च्चबीजेन यत्नतः ।
कुण्डलीं मूलचक्रस्थामुत्थाप्य साधकोत्तमः ॥७२॥
चक्राणि क्रमशो भित्त्वा स्वान्तमानीय चित्कलाम् ।
जीवात्मानं कुण्डलिन्या हंसमन्त्रेण देशिकः ॥७३॥
मस्तकस्थसहस्रारपद्मे ब्रह्मणि योजयेत् ।
ऐक्यन्तु भावयेत्तत्र जीवात्म-परमात्मनोः ॥७४॥

उत्तम साधक मूलचक्र में स्थित कुण्डली को सुषुम्णारन्ध्र के मार्ग से कूर्च बीज के द्वारा जागृत (उठाकर) करके चक्रों का (समस्त चक्रों का) क्रमशः भेदन करके हृदय तक लाकर चेतन कला स्वरूप जीवात्मा को कुण्डलिनी के साथ 'हंस' मन्त्र के द्वारा मस्तक में विद्यमान सहस्रार पद्म में स्थित ब्रह्म में संयुक्त करे और वहाँ जीवात्मा एवं परमात्मा की एकता की भावना करे।

प्रादुर्भूतं शरीरन्तु ब्रह्मणो भावयेत्सुधीः ।
ततः संस्थाप्य हृज्जीवं मूलाधारे तु कुण्डलीम् ॥

उस समय बुद्धिमान साधक यह भावना करे कि ब्रह्म के शरीर का प्रादुर्भाव

हो गया है, उसके अनन्तर पुनः जीव को हृदय में और कुण्डली को मूलाधारचक्र में स्थित करे।

एवं क्रमेण यो मर्त्यः करोति नियतात्मवान् ।
गतागतं कुण्डलिन्या 'जीवन्मुक्तः' स उच्यते ।।७६।।

इस प्रकार जो नियतात्मा मनुष्य क्रमशः कुण्डलिनी का गमन-आगमन अर्थात् पूर्वोक्त मार्ग से सहस्रार पद्म में स्थित ब्रह्म तक गमन और पुनः मूलाधारचक्र में वापस अवस्थिति को करता है, वह जीवन्मुक्त कहा जाता है।

अथ चक्रोपरि ध्यायेत् षट्पञ्चाशद्दलम्परम् ।
अष्टाविंशतितत्त्वानां शिवशक्तिप्रभेदतः ।।७७।।

उसके अनन्तर पूर्वोक्त चक्र के ऊपर छप्पन दलों वाले अन्य चक्र का ध्यान करे। इन छप्पन दलों में अट्ठाइस तत्त्वों का शिव और शक्ति भेद से द्विगुणन करके भावना करे।

पार्थिवानां द्विगुणितः प्रतिपत्रं विभावयेत् ।
शब्दस्पर्शौ रूपरसौ गन्धस्तन्मातृ[त्रि ?]का इमे ।।७८।।

उपर्युक्त अट्ठाइस तत्त्वों में प्रति पत्र द्विगुणित पार्थिव आदि तत्त्व अर्थात् शब्द, स्पर्श, रूप, रस, और गन्ध तथा इनकी तन्मातृका अर्थात् शब्दतन्मात्रा, स्पर्शतन्मात्रा, रूपतन्मात्रा, रसतन्मात्रा, और गन्धतन्मात्रा ये दश तत्त्व भूत हैं।

भूतानि धीन्द्रियाणीति पञ्चकर्मेन्द्रियाणि तु ।
मनोबुद्धिरहङ्कारश्चित्तञ्चेति चतुर्विधम् ।।७९।।

तथा पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, मन-बुद्धि और अहंकार रूप चार अन्तःकरण हैं।

अन्तःकरणमेतद्वै कालः प्रकृतिपूरुषौ ।
महत्तात्त्वमिति ज्ञेयमष्टाविंशतिसंख्यकम् ।।८०।।

ये उपर्युक्त अन्तःकरण काल, प्रकृति-पुरुष और महत्तत्व आदि अट्ठाइस संख्या में तत्त्व हैं।

उड्डीश्वरादयो ध्येयाः प्रतिपत्रं क्रमाच्छिवाः ।
उड्डीश्वरोड्डीश्वर्यौं जलेश्वरजलेश्वरी ॥८१॥
पूर्णेश्वरः पञ्चमः स्यात् षष्ठी पूर्णेश्वरी मताः ।
कामेश्वरः सप्तमः स्यात् तथा कामेश्वरी मता ॥८२॥
श्रीकण्ठो गगना चैवानन्तश्च सुरसातथा ।
शङ्करश्च मतिश्चैव तथा पिङ्गल ईरितः ॥८३॥
ईश्वर्यन्ता हि पातालदेवीति परिकीर्त्तिता ।
नादाख्यनादे चानन्दा डाकिनी परिकीर्त्तिता ॥८४॥
आलस्यो राकिनी प्रोक्ता महानन्दश्च लाकिनी ।
योग्यश्च काकिनी शक्तिः रतीतः शाकिनी स्मृता ॥८५॥
पारदो हाकिनी रक्ता आधारेशस्तथा स्मृतः ।
चक्रीशश्चैव चण्डी च कुरङ्गीशः करालिका ॥८६॥
महध्रीशो महोच्छ्वासा अनादिविमलस्तथा ।
मातङ्गि सर्वज्ञ विमला पुमिहा च तथा स्मृता ॥८७॥
योगविमदः शाम्भवी विद्धविमल ईरितः ।
वाचा परा च समयविमलश्च कुलालिका ॥८८॥
मित्रेश कुब्जो उड्डीशो मज्जा षष्ठीश ईरितः ।
कुलेश्वरी च कुब्जाचर्यावेशस्तथा स्मृतः ॥८९॥

उपर्युक्त छप्पन दलों वाले चक्र में प्रति पत्र उड्डीश्वर आदि शिव और शक्तियों का ध्यान करना चाहिए। ये शिव शक्तियाँ निम्नलिखित हैं—१. उड्डीश्वर २. उड्डीश्वरी ३. जलेश्वर ४. जलेश्वरी ५. पूर्णेश्वर ६. पूर्णेश्वरी ७. कामेश्वर ८. कामेश्वरी ९. श्रीकण्ठ १०. गगना ११. अनन्त १२. सुरसा १३. शंकर १४ मति १५. पिङ्गल १६. ईश्वरपर्यन्त १७. पातालदेवी १८. नादनिवासी १९. नाद २०. आनन्दा-डाकिनी २१. आलस्य २२. राकिनी २३. महानन्द २४. लाकिनी २५. योग्य २६. काकिनी शक्ति २७. अतीत २८. शाकिनी २९. पारद ३०. हाकिनी ३१. आधारेश ३२. रक्ता ३३. चक्रीश ३४. चण्डी ३५. कुरङ्गीश ३६. करालिका ३७. महध्रीश ३८. महोच्छ्वासा ३९. अनादि विमल ४०. मातङ्गी ४१. सर्वज्ञ ४२. विमला ४३. पुं ४४. इहा ४५. योगविमद ४६. शाम्भवी ४७. विद्धविमल ४८. वाचापरा ४९. समयविमल ५०. कुलालिका ५१. मित्रेश ५२. कुब्जा ५३. उड्डीश ५४. मज्जा ५५. षष्टीश ५६. कुलेश्वरी तथा कुब्जाचार्यवेश माने गये हैं।

तेजोरूपाश्च ते[ता ?] ज्ञेया सर्वाः पार्थिवरश्मयः ।
षट्पञ्चाशद्दलस्थाश्च ध्येयास्ता शिवशक्तयः ॥६०॥

ये सभी तेजोरूप पार्थिव रश्मियाँ शिवशक्तियाँ हैं जो छप्पन दलचक्र के दलों पर स्थित है, इनका ध्यान करना चाहिए ।

एवं क्रमेण जानाति मूलचक्रं मनोहरम् ।[1]
स एव योगी ब्रह्मज्ञो मोक्षभागी न संशयः ॥६१॥

जो व्यक्ति इस क्रम के साथ मनोहर मूलचक्र को जानता है वही योगी है, ब्रह्मज्ञ है और मोक्ष का भागी है, इसमें कोई सन्देह नहीं है ।

इतिमैथिलश्रोत्रियश्रीबदरीनाथविरचिताया चक्रकौमुद्यां मूलाधारचक्रविवृतिर्नाम प्रथमः परिच्छेदः ॥१॥

मैथिल श्रोत्रिय श्री बदरीनाथ विरचित चक्रकौमुदी में मूलाधारचक्रविवृति नामक प्रथम परिच्छेद पूर्ण हुआ ।

तुलनीयः—१. ध्यात्वैतन्मूलचक्रान्तरविवरलसत्कोटिसूर्यप्रकाशां
वाचामीशो नरेन्द्रः स भवति सहसा सर्वविद्याविनोदी ।
आरोग्यं तस्य नित्यं निरवधि च महानन्दचित्तान्तरात्मा
वाक्यैः काव्यप्रबन्धैः सकलसुरगुरून् सेवते शुद्धशीलः ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, आधारचक्रम्, श्लोक १४]

[द्वितीयः परिच्छेदः]

स्वाधिष्ठानचक्रम्

स्वाधिष्ठानमथो वक्ष्ये चक्रं ज्ञानप्रदं नृणाम् ।
यस्य स्मरणमात्रेण भेदज्ञानं विनश्यति ॥१॥

इसके अनन्तर स्वाधिष्ठान चक्र का वर्णन करूँगा जो मनुष्यों के लिये ज्ञानप्रद हैं तथा जिसके स्मरण मात्र से भेंद बुद्धि नष्ट होती है ।

लिङ्गमूले स्मरेत्पद्मं सिन्दूराभन्तु षड्दलम् ।
बादिलान्तयुतन्तस्मिन् मण्डलं ध्येयमम्भसः ॥२॥[1]

लिङ्गमूल में सिन्दूर की कान्ति वाले षट्दल कमल का स्मरण करे और उसमें बादिलान्त (व, भ, म, य, र, ल) से युक्त अम्भोमण्डल का ध्यान करे ।

अर्द्धचन्द्राकृतिं स्वच्छं पद्मयुग्मेन लाञ्छितम् ।
तस्मिन् चतुर्भुजं स्वच्छं वंबीजं वारुणं स्मरेत् ॥३॥[2]

जो कि अर्द्धचन्द्राकृति से स्वच्छ दो कमलों से युक्त है, उसमें स्वच्छ वारुण बीज 'व' का स्मरण करे ।

तुलनीयः—१. सिन्दूरपूररुचिरारुणपद्ममन्यत्
सौषुम्ण मध्यघटितं ध्वजमूलदेशे ।
अङ्गच्छदैः परिवृतं तडिदाभवर्णै-
र्वाद्यैः सबिन्दुलसितैश्च पुरन्दरान्तैः ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, स्वाधिष्ठानचक्रम्, श्लोक १५]

२. तस्यान्तरे प्रविलसद्विशदप्रकाश-
मम्भोजमण्डलमथो वरुणस्य तस्य ।
अर्द्धेन्दुरूपलसितं शरदिन्दुशुभ्रं
वंकारबीजममलं मकराधिरूढं ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, स्वाधिष्ठानचक्रम्, श्लोक १६]

मकरारूढमुद्दीप्तं ततो विष्णुं चतुर्भुजम् ।
गदाब्जशङ्खखड्गञ्च धारयन्तं विभुं स्मरेत् ।।४।।[१]

उसके अनन्तर मकर पर आरूढ़ उद्दीप्त अर्थात् तेज: स्वरूप चार भुजाओं वाले गदा, कमल, शङ्ख तथा खड्ग को धारण किए हुए विभु भगवान (हरि) का स्मरण करे।

राकिनीं सव्यदेशे तु नीलाभां वेदबाहुकाम् ।
स्मरार्द्रचित्तालिलितां दिव्यां योगप्रदर्शनीम् ।।५।।[२]

उनके बायीं ओर नील कान्ति वाली बाहु में वेद लिए हुए कामार्द्र चित्त दिव्य और योग प्रदर्शन करने वाली राकिनी को (स्मरण) करे।

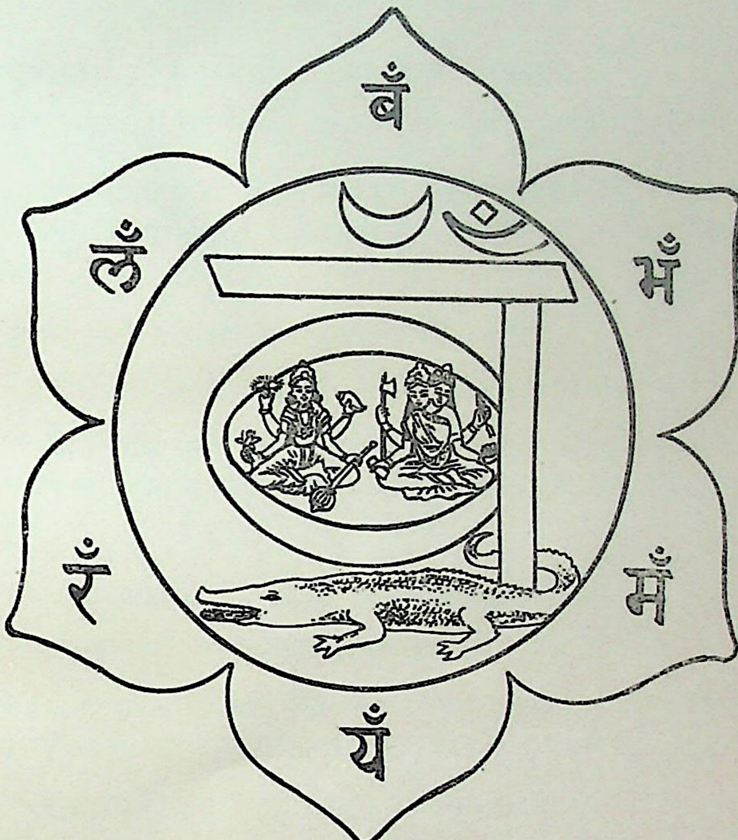
तस्योपरि द्विपञ्चाशद्दलं शोभितपङ्कजम् ।
षड्विंशत्याप[पि ?]तत्त्वानि शिवशक्तिप्रभेदतः ।।६।।
द्विगुणं कल्पयित्वा तु प्रतिपत्रं स्मरेद्बुधः ।
द्विपञ्चाशन्मिते पत्रे शिवशक्तिर्वि[क्ति वि ?]भावयेत् ।।७।।

उसके ऊपर बावन दलों से सुशोभित पङ्कज को स्मरण करे, उस पर प्रति पत्र शिव और शक्ति के भेद से द्विगुण की कल्पना करे। छब्बीस आदिम तत्त्वों को स्मरण करे, इस प्रकार बावन पत्रों पर उतने ही संख्या में शिव और शक्ति की विभावना करे।

तुलनीयः —१. तस्याङ्कदेशकलितो हरिरेव पायात्
नीलप्रकाशरुचिरश्रियमादधानः ।
पीताम्वरः प्रथमयौवनगर्वधारी–
श्रीवत्सकौस्तुभधरो धृतवेदबाहुः ।।
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः स्वाधिष्ठानचक्रम्, श्लोक १७]

२. अत्रैव भाति सततं खलु राकिणी सा
नीलाम्बुजोदरसहोदरकान्तिशोभा ।
नानायुधोद्यतकरैर्लसिताङ्गलक्ष्मी–
दिव्याम्बराभरणभूषितमत्तचित्ता ।।
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, स्वाधिष्ठानचक्रम्, श्लोक १८]

स्वाधिष्ठानचक्रम्
(HYPOGASTRIC PLEXUS)
षट्दलपद्म



चित्रसंख्या : ३

आद्यतत्त्वानि　कथ्यन्ते　क्षित्यप्तेजोमरुन्नभः ।
पञ्चज्ञानेन्द्रियाणीति　पञ्चकर्मेन्द्रियाणि　च ॥८॥

आद्यतत्त्व निम्नलिखित हैं—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ (श्रोत्र, त्वचा, नासिका, चक्षु और रसना) तथा पाँच कर्मेन्द्रियाँ (वाणी, हाथ, पैर, पायु = मलमार्ग, उपस्थ = मूत्रमार्ग) आदि हैं ।

तेषामर्था　मनश्चेति　षड्विंशतिरुदाहृताः ।
ज्ञानेन्द्रियाणि श्रोत्रं त्वग् दृग् जिह्वा नासिका विदुः ॥९॥

उन दशों इन्द्रियों के दश विषय और मन, इस प्रकार छब्बीस आदि तत्त्व कहे गये हैं तथा पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ निम्नलिखित हैं—श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, जिह्वा तथा नासिका ।

ज्ञानेन्द्रियार्थाः शब्दाद्याः स्मृताः कर्मेन्द्रियाणि तु ।
वाक्पाणिपादपायुन्धू [?] संज्ञामाहुर्मनीषिणः ॥१०॥

ज्ञानेन्द्रियों के पाँच विषय शब्द इत्यादि अर्थात् शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध कहे गये हैं । पाँच कर्मेन्द्रियाँ-वाणी, पाणि (हाथ) पैर, पायु और न्धू (उपस्थ) हैं ।

वचनादानगतयो　विसर्गानन्दसंज्ञकाः ।
कर्मेन्द्रियार्थाः　सम्प्रोक्ता　अर्थग्राह्या　दिगादयः ॥११॥

इनके विषय क्रमशः बोलना, देना, चलना, विसर्जन करना और आनन्द करना है या कहे गये हैं । यहाँ अर्थ का तात्पर्य ग्रहण और दिशा अर्थात् अनुभव है ।

इन्द्रियाणां प्रवृत्तौ तु विषये　कारणम्मनः ।
अतो मनोयुतास्तत्स्था　गृह्णन्ति　विषयान्मुहुः ॥१२॥

इन्द्रियों की विषयों के प्रवृत्ति में कारण मन हुआ करता है इसलिये मन से युक्त इन्द्रियाँ ही संबद्ध विषयों को बारंबार ग्रहण करती हैं ।

त्वगादिकरणैस्तेषां ज्ञानं स्यादात्मनि स्फुटम् ।
घटाकारा हि धीर्वृत्ति घटज्ञानं　तदेव　तु ॥१३॥

त्वचा आदि रूप करणों से आत्मा में उन विषयों का स्फुट ज्ञान होता है, विषयों का यह ज्ञान घट आदि के आकार में बुद्धि का व्यापार है ।

सच्चिदानन्दरूपो यद् ज्ञानं तद्‌ब्रह्म रूपकम् ।
द्वैतज्ञानेन तज्ज्ञानं तज्ज्ञाने तन्निवर्त्तते ॥१४॥

सत्, चित्, आनन्द स्वरूप जो ज्ञान है, वह ब्रह्म रूप है। यह ज्ञान द्वैत ज्ञान पूर्वक होता है किन्तु ब्रह्म के ज्ञान हो जाने पर द्वैत बुद्धि दूर हो जाती है।

शिवशक्तिरथो वक्ष्ये सद्योजातादिकाः क्रमात् ।
सद्योजाताश्च माया च वामदेवश्च श्रीस्तथा ॥१५॥
अघोरपद्मे तत्पुरुषोऽम्बिका निवृत्त्यनन्तकौ ।
अनाथश्च प्रतिष्ठा च विद्या जनाश्रितस्तथा ॥१६॥
अचित्यश्च तथा शान्ता उमा च शशिशेखरः ।
तीव्रो गङ्गा समाख्याता वणिवाहः सरस्वती ॥१७॥
अम्बुवाहश्च कमला तेजोधीशश्च पार्वती ।
विद्यावाणीश्वरश्छिन्ना कमला चतुर्विधेश्वरौ ॥१८॥
उमा गङ्गेश्वरः प्रोक्तो मन्मथा च प्रकीर्त्तिता ।
कृष्णेश्वरश्च श्रीपा च श्रीकण्ठश्च कलास्मृता ॥१९॥
आनन्दश्च सती प्रोक्ता शङ्करो रत्नमेखला ।
यशोवती पिङ्गलश्च हंसा साध्याख्य ईरितः ॥२०॥
परा दिव्यौघवार्मी च सारदिव्यौघ ईरितः ।
ज्येष्ठा पाठौघ रौद्र्यौ च सर्वेश्वर उदाहृतः ॥२१॥

उसके अनन्तर सद्योजात (तुरत उत्पन्न) आदि शिव शक्तियों का क्रमशः कथन करूँगा जो १. सद्योजात २. माया ३. वामदेव ४. श्री ५. अघोर ६. पद्म ७. तत्पुरुष ८. अम्बिका ९. निवृत्ति १०. अनन्तक ११. अनाथ १२. प्रतिष्ठा १३. विद्या १४. जनाश्रित १५. अचित्य १६. शान्ता १७. उमा १८. शशिशेखर १९. तीव्र २०. गंगा २१. वणिवाह २२. सरस्वती २३. अम्बुवाह २४. कमला २५. तेजोधीश २६. पार्वती २७. विद्या वाणीश्वर २८. छिन्ना २९. कमला ३०. चतुर्विधेश्वर ३१. उमा ३२. गंगेश्वर ३३. मन्मथा ३४. कृष्णेश्वर ३५. सृपा ३६. श्रीकण्ठ ३७. कला ३८. आनन्द ३९. सती ४०. शंकर ४१. रत्नमेखला ४२. यशोमती ४३. पिङ्गल ४४. हंसा ४५. साध्य ४६. परादिव्यौघ ४७. वारुणी ४८. सारदिव्यौघ ४९. ज्येष्ठा ५०. पाठौघ ५१. रौद्री ५२. सर्वेश्वर इत्यादि हैं।

सर्वमयीति संज्ञेया आप्यरश्मय ईरिताः ।
द्विपञ्चाशद्दलस्थाश्च ध्येयास्तत्संख्यकाः शिवाः ॥२२॥

उपर्युक्त संख्यावाली सर्वमयी जल की रश्मियाँ कही जाती हैं जो कि बावन दलों पर स्थित हैं। इन बावन संख्या वाली शिवाओं (शिवशक्तियों) का ध्यान करना चाहिए।

ध्यातास्ता दर्शयन्तीहाभ्यासिनां ज्ञानमुत्तमम् ।
प्रज्ञानं ब्रह्म यत्प्रोक्तं तन्मयास्ते महीतले ॥२३॥

ध्यान की हुई ये शिव शक्तियाँ साधक जनों को उत्तम ज्ञान का दर्शन कराती हैं जिसे प्रज्ञान ब्रह्म कहा गया है। ये शिव शक्तियाँ पृथ्वी पर तद्रूप ही हैं।

स्वाधिष्ठानमिदं चक्रं क्रमेणानेन यो नरः ।[1]
जानाति लोके धन्यः स्यात् जीवन्मुक्तो भवेन्नरः ॥२४॥

जो मनुष्य इस स्वाधिष्ठानचक्र को इस क्रम से जानता है, वह संसार में धन्य है और वह मनुष्य जीवनमुक्त हो जाता है।

इति मैथिलश्रोत्रियश्रीबदरीनाथविरचितायां चक्रकौमुद्यां स्वाधिष्ठानचक्रविवृतिर्नाम द्वितीयः परिच्छेदः ॥२॥

मैथिलश्रोत्रियश्रीबदरीनाथ विरचित चक्रकौमुदी में स्वाधिष्ठान चक्र-विवृति नामक द्वितीय परिच्छेद समाप्त हुआ।

—:०:—

तुलनीयः—१. स्वाधिष्ठानाख्यमेतत् सरसिजममलं चिन्तयेद् यो मनुष्य-
तस्याहंकारदोषादिकसकलरिपुः क्षीयते तत्क्षणेन ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, स्वाधिष्ठानचक्रम्, श्लोक १९]

[तृतीयः परिच्छेदः]

मणिपूरचक्रम्

मणिपूरसुचक्रन्तु वक्ष्ये सर्वार्थसिद्धिदम् ।
यच्चिन्तनाच्चिदानन्दप्राप्तिर्भवति निश्चितम् ॥१॥

मणिपूरचक्र के सम्बन्ध में मैं वर्णन प्रस्तुत करूँगा जो सम्पूर्ण सिद्धियाँ प्रदान करने वाला है तथा जिसके चिन्तन से चिदानन्द स्वरूप (हरि) की प्राप्ति निश्चित ही होती है ।

नाभिमूले नीलपद्मं दशच्छदसमन्वितम् ।
डादिफान्तयुतं तस्मिन् वह्निमण्डलमीरितम् ॥२॥[1]

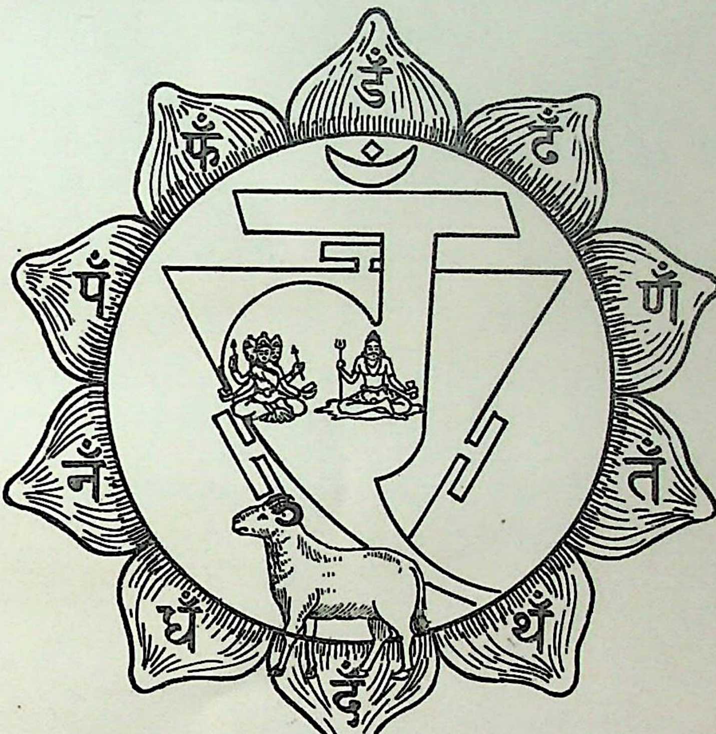
नाभिमूल में दश पत्रों से युक्त नील कमल है जो 'ड' मन्त्र से 'फ' मन्त्र (ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ) पर्यन्त मन्त्रों से युक्त है । उसमें वह्निमण्डल है ऐसा कहा जाता है ।

नवीनभानुसदृशं त्रिकोणं स्वस्तिकान्वितम् ।
तस्मिन् ऋतुभुजं बीजं रं वह्नेरजवाहनम् ॥३॥

जो नवीन सूर्यमण्डल के सदृश है, त्रिकोण और स्वस्तिक से युक्त है उसमें छः भुजाओं वाला वह्नि के रज का वहन करने वाला 'रं' बीज है ।

तुलनीयः—१. तस्योर्ध्वे नाभिमूले दशदललसिते पूर्णमेघप्रकाशे
नीलाम्भोजप्रकाशैरुपहितजठरे डादिफान्तैः सचन्द्रैः ।
ध्यायेद्वैश्वानरस्यारुणमिहिरसमं मण्डलं तत् कोणं
तद्बाह्ये स्वस्तिकाख्यैस्त्रिभिरभिलसितं तत्र वह्नेः स्ववीजम् ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, मणिपूरचक्रम्, श्लोक २०]

मणिपूरचक्रम्
(EPIGASTRIC PLEXUS)
दशदलपद्म



चित्रसंख्या : ४

तत्र रुद्रं त्रिनेत्रन्तु वराभीतिलसत्करम् ।[1]
भानुकान्ति ततः शक्ति लाकिनीं वेदबाहुकाम् ॥४॥

उसमें त्रिनेत्र रुद्र स्थित हैं जिनके दोनों बाहु वरदान तथा अभयदान के मुद्रा में है। साथ ही उस पद्म पर सूर्य की तरह कान्तिवाली लाकिनी वेदबाहुका शक्ति भी स्थित है।

वराभीतिं पद्मखड्गौ दधानौ श्यामलात्मिकाम् ।
द्विषष्टिपत्रसहितं पद्मं तस्योपरि स्मरेत् ॥५॥

जिसके चारो भुजाओं में से दो वरदान तथा अभयदान की मुद्रा में तथा दो कमल तथा खड्ग धारण किये हुए हैं। जिनका स्वरूप श्यामल है। उस पद्म से ऊपर बासठ पत्रों से युक्त पद्म का स्मरण करे।

एकत्रिंशत्संख्यकानि वह्नितत्त्वानि साधकः ।
शिवशक्तिप्रभेदेन द्विगुणानि प्रकल्पयेत् ॥६॥

उस पत्रों में साधक ३१ वह्नितत्त्वों की तथा उसमें शिवशक्ति के भेद से दुगुने की अर्थात् बासठ तत्त्वों की कल्पना करे।

द्विषष्टिदलमध्येषु तानि तत्त्वानि भावयेत् ।
द्विषष्टिसंख्यका ध्येयाः पत्रस्थाः शिवशक्तयः ॥७॥

उन बासठ पत्रों के मध्य उन तत्त्वों की भावना करे तथा बासठ संख्याओं वाली पद्मपत्रों पर स्थित बासठ शिवशक्तियों का ध्यान करे।

तुलनीयः—१. ध्यायेन्मेषाधिरूढं नवतपननिभं वेदबाहूज्वलाङ्गं
तत्क्रोडे रुद्रमूर्तिर्निवसति सततं शुद्धसिन्दूररागः ।
भस्मालिप्ताङ्गभूषाभरणसितवपुर्वृद्धरूपी त्रिनेत्रो
लोकानामिष्टदाताऽभयलसितकरः सृष्टिसंहारकारी ॥
अत्रास्ते लाकिनी सा सकलशुभकरी वेदबाहूज्वलाङ्गी
श्यामापीताम्बराद्यैर्विविधविरचनालंकृता मत्तचित्ता ।
ध्यात्वैतन्नाभिपद्मं प्रभवति नितरां संहृतौ पालने वा
वाणी तस्याननाब्जे निवसति सततं ज्ञानसन्दोहलक्ष्मीः ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, मणिपूरचक्रम्, श्लोक २१-२२]

पञ्चभूतानि तन्मात्राः पञ्चकर्मेन्द्रियाणि तु ।
ज्ञानेन्द्रियाणि पञ्चैव तेषामर्थां दश स्मृताः ॥८॥
मन इत्यग्नितत्त्वानि कथ्यते शिवशक्तयः ।
परावरेशः परमः तत्परो पर एव च ॥९॥
चिदानन्दोऽप्यघोरश्च स्वच्छ-सामरसौ तथा ।
भूतेश्वरश्च आनन्द आलस्यश्च तथा स्मृतः ॥१०॥
योगानन्दप्रभानन्दौ तथातीतः प्रकीर्त्तितः ।
योगेश्वररसस्नादौ पाठेश्वरस्तथा स्मृतः ॥११॥
कुलकेश्वरः कुलेश्वरः श्रीकण्ठः शङ्करस्तथा ।
अनन्तः पिङ्गलश्चैव सदाख्यश्चे करालकः ॥१२॥
सिद्धगुरू रत्नगुरुः शान्तः शिवगुरुस्तथा ।
सेनगुरुस्समयगुरुराग्नेयो रामयः स्मृताः ॥१३॥

पाँच महाभूत, पाँच तन्मात्राएँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ तथा उनके दश विषय एवं मन ये अग्नि तत्त्व हैं और शिव एवं शक्ति के रूप में स्मरण किये जाते हैं। १. परावेश २. परम ३. तत्पर ४. पर ५. चिदानन्द ६. अघोर ७. स्वच्छ ८. सामरस ९. भूतेश्वर १०. आनन्द ११. आलस्य १२. योगानन्द १३. प्रभानन्द १४. अतीत १५. योगेश्वर १६. रसस्नाद १७. पाठेश्वर १८. कुल-केश्वर १९. कुलेश्वर २०. श्रीकण्ठ २१. शंकर २२. अनन्त २३. पिङ्गल २४. सदाख्य २५. करालक २६. सिद्धगुरु २७. रत्नगुरु २८. शान्त २९. शिवगुरु ३०. सेनगुरु ३१. समयगुरु ये आग्नेय **रामय** [?] कहे गये हैं।

चण्डेश्वरी चक्षुष्मती गुह्यकाली तथा स्मृता ।
सम्वर्त्ता मूलकुब्जा च गङ्गा च ललिता समया ॥१४॥
स्पर्शा शब्दा डाकिनी रत्नडाकिन्यपि स्मृता ।
चक्रडाकिनी पद्मडाकिनी कुब्जडाकिन्यपि स्मृता ॥१५॥

१. चण्डेश्वरी २. चक्षुष्मती ३. गुह्यकाली ४. सम्वर्त्ता ५. मूलकुब्जा ६. गङ्गा ७. ललिता ८. स्पर्शा ९. शब्दा १०. डाकिनी ११. रत्नडाकिनी १२. चक्रडाकिनी १३. पद्मडाकिनी १४. कुब्जडाकिनी १५. प्रचण्डडाकिनी

प्रचण्डडाकिनी चण्डकौशला पाविनी तथा ।
समया च तथा कामा रेवती ज्वाल इत्यपि ॥१६॥
करणा कुलिका रात्रिर्गुरुपारा तथा स्मृता ।
शान्त्यतीता च शान्ता च प्रतिष्ठा च क्रिया तथा ॥१७॥
निवृत्तिरिति सम्प्रोक्ताः शक्तयो वह्निरश्मयः ।
योगमार्गप्रदर्शिन्यो धा[ध्या ?]तव्या योगवर्त्मना ॥१८॥

१६. चण्ड कौशला १७. पाविनी (मालिनी ?) १८. समया १९. कामा २०. रेवती २१. ज्वाल २२. कर्णा २३. कुलिका २४. रात्रि २५. गुरुपारा २६. शान्ति २७. अतीता २८. शान्ता २९. प्रतिष्ठा ३०. क्रिया ३१. निवृत्ति ये वह्नि की रश्मियाँ, शक्तियाँ कही गयी है। ये योग मार्ग का प्रदर्शन करती हैं तथा योग मार्ग से इसका ध्यान करना चाहिए।

चक्रन्तु मणिपूराख्यं यो जानाति विधानतः ।
स एव मुक्तः सर्वज्ञो हरिसायुज्यमाप्नुयात् ॥१९॥

उपर्युक्त मणिपूर नामक चक्र को जो विधिपूर्वक जानता है वही व्यक्ति सर्वज्ञ और मुक्त होता हुआ हरि के सायुज्य को प्राप्त करता है।

इति मैथिलश्रोत्रियश्रीबदरीनाथविरचितायां चक्रकौमुद्यां मणिपूरचक्रविवृतिर्नाम तृतीयः परिच्छेदः ॥३॥

मैथिल श्रोत्रिय श्रीबदरीनाथ रचित चक्रकौमुदी में मणिपूरचक्रविवृतिनामक तीसरा परिच्छेद समाप्त हुआ।

—:०:—

चतुर्थः परिच्छेदः

अनाहतचक्रम्

अनाहतचक्रन्तु वक्ष्ये जीवनसंयुतम् ।[1]
भावना यस्य विमलं ज्ञानं यच्छति देहिनाम् ।।१।।

इस परिच्छेद में मैं जीवन सहित अनाहतचक्र का वर्णन करूँगा जिसकी भावना मनुष्यों को निर्मल ज्ञान प्रदान करती है ।

हृत्पद्मं भानुदलं कादिठान्तार्णसंयुतम् ।
बालार्कसदृशं तस्मिन् वायोः षट्कोणमण्डलम् ।।२।।

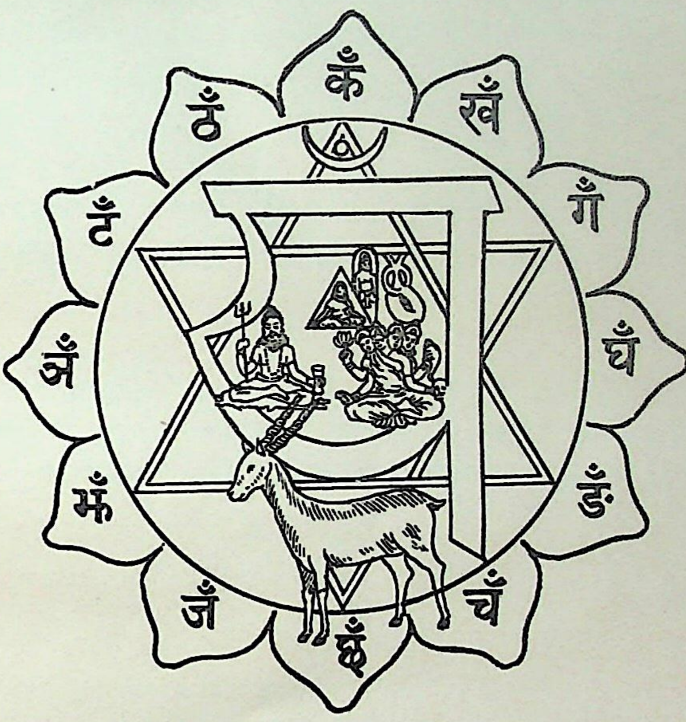
हृदय स्थल पर बारह दलों का कमल है जो 'क' से 'ठ' पर्यन्त (क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ) वर्णों से युक्त है, इसका वर्ण बाल सूर्य (उदय होते हुए सूर्य) के सदृश है उसमें षट्कोण वायुमण्डल है ।

तुलनीयः—१. तस्योर्ध्वे हृदि पङ्कजं सुललितं बन्धूककान्तिज्वलं
काद्यैर्द्वादशवर्णकैरुपहितं सिन्दूररागान्वितैः ।
नाम्नाऽनाहत संज्ञकं सुरतरुं वाञ्छातिरिक्तप्रदं
वायोर्मण्डलमत्र धूमसदृशं षट्कोणशोभान्वितम् ।।
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, अनाहतचक्रम्, श्लोक २३]

अनाहतचक्रम्

(CARDIAC PLEXUS)

द्वादशदलपद्म



चित्रसंख्या : ५

षड्विन्दुसंयुतं धूम्रवर्णं तस्मिन् मनोहरम् ।[1]
मृगाधिरूढं यं बीजं वेदबाहुं गदान्वितम् ॥३॥
तस्मिन् वराभीतिधरो वर्तते ईश्वरो विराट् ।[2]
तद्वामे काकिनी शक्तिः पीतवर्णा चतुर्भुजा ॥४॥

उसमें छह विन्दुओं से युक्त धूम्रवर्ण मनोहर मृग पर बैठे हुए यं बीज वाले दो हाथों में वेद और गदा तथा दो अन्य हाथों में वरदान और अभयदान की मुद्रा से युक्त विराट ईश्वर विद्यमान हैं जिनके वायीं ओर पीतवर्णवाली और चार भुजाओं वाली काकिनी शक्ति विराजमान हैं।

वरशूलाभयं पाशं विभ्रती कामरूपिणी ।
इयन्तु काकिनी शक्तिर्भवबन्धविनाशिनी ॥५॥

(ये काकिनी शक्ति) वरदान एवं अभयदान की मुद्रा वाले दो बाहु तथा शेष दो बाहुओं में शूल और पाश को धारण किए हुए रहती हैं और यह कामरूपिणी हैं। यह काकिनी शक्ति भवबन्धनों (सांसारिक कष्टों को) नष्ट करती हैं।

तुलनीयः—१. तन्मध्ये पवनाक्षरञ्च मधुरं धूमावलीधूसरं
ध्यायेत् पाणिचतुष्टयेन लसितं कृष्णाधिरूढं परम् ।
तन्मध्ये करुणानिधानममलं हंसाभमीशाभिधं
पाणिभ्यामभयं वरञ्च विदधल्लोकत्रयाणामपि ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, अनाहत्चक्रम्, श्लोक २४]

२. अत्रास्ते खलु काकिनी नवतडित्पीता त्रिनेत्राशुभा
सर्वालङ्करणान्विता हितकरी सम्यग् जनानां मुदा ।
हस्तैः पाशकपालशोभनवरान् संबिभ्रती चाभयं
मत्तापूर्णसुधारसार्द्रहृदया कङ्कालमालाधरा ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, अनाहत्चक्रम्, श्लोक २५]

ततः कर्णिकायां रवेर्मण्डलान्त-[1]
स्त्रिकोणं सदास्ते तडित्कोटितुल्यम् ।
तदन्तर्वराङ्गं ज्वलज्वाललिङ्गं
तदन्तर्हि हंसस्वरूपो हि जीवः ॥६॥

उसके बाद कर्णिका में त्रिकोण सूर्यमण्डल का निर्माण करे जो सदा ही विद्युत्कोटि के समान कान्तिमान रहता है। उसके अन्तर्गत सुन्दर अंगों वाला जलती हुई ज्योतिमय लिङ्ग स्थित रहता है और उसके अन्तर्गत हंस स्वरूप जीव स्थित रहता है।

अनाद्यविद्याव्यामोहहेतुर्ब्रह्मसमन्विता ।
सत्त्वशुद्धिविशुद्धिभ्यां मायाबिम्बे च ते मते ॥७॥

ब्रह्म के व्यामोह का हेतु अनादि अविद्या से युक्त है। इस माया (अविद्या) के शुद्धि-सत्त्व और विशुद्धि-सत्त्व (सत्त्वशुद्धि और सत्त्वविशुद्धि) ये दो विम्व माने गये हैं।

विद्याविशिष्टसर्वज्ञ ईश्वरः परिकीर्त्तितः ।
अविद्यावशगो जीवस्तत्तद्भेदादनेकधा ॥८॥

विद्या से विशिष्ट सर्वज्ञ को ईश्वर कहते हैं तथा अविद्या के वशीभूत जीव कहा जाता है। वह विविध भेदों के आधार पर अनेक प्रकार का है।

स्यात्कारणं शरीरं सा तत्र प्राज्ञोऽभिमानवान् ।
प्रदीपकलिकाकारो जीवो कर्मवशे स्थितः ॥९॥

वह अविद्या कारण शरीर है जहाँ अभिमान (अहंकार) युक्त प्राज्ञजीव जो कि दीपकणिका के आकार का है, कर्मवश स्थित रहता है।

तुलनीयः—१. एतन्नीरजकर्णिकान्तरलसच्छक्तिस्त्रिकोणाभिधा
विद्युत्कोटिसमानकोमलवपुः सास्ते तदन्तर्गतः ।
वाणाख्यः शिवलिङ्गकोऽपि कनकाकाराङ्गरागोज्वलो
मौली सूक्ष्मविभेदयुङ्मणिरिव प्रोल्लासलक्ष्म्यालयः ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, अनाहतचक्रम्, षष्ठाध्यायः, श्लोक २६]

बाह्येन्द्रियैः शरीरार्थान् जीवो गृह्णाति यर्हि सः ।
तदा तु जागरावस्था जीवस्य परिकीर्त्तिताः ॥१०॥

जिस समय जीव बाह्य इन्द्रियों की सहायता से या माध्यम से शरीर के विषयों को ग्रहण करता है, तब जीव की जागर अवस्था कही जाती है।

श्रमादिविनिवृत्त्यर्थं लिङ्गदेहे विशत्यसौ ।
बहिर्हृष्टसमानार्थान् भुञ्जन् क्रीडन् विराजते ॥११॥

वह जीव श्रम आदि की निवृत्ति के लिए लिङ्गदेह में प्रवेश करता है और अन्यथा उसके बाहर सुखदायक विषयों का भोग करता हुआ और क्रीड़ा करता हुआ विराजता है।

बाह्येन्द्रियादिसञ्चारः स्वल्पावस्था तदा स्मृता ।
कारणे सत्त्वमानन्दमयो मोदादिवृत्तिभिः ॥
प्राप्ते कारणदेहन्तु लिङ्गदेहस्य लीनता ॥१२॥

बाह्य इन्द्रियों में जब उसका संचार होता है तब उस अवस्था को स्वल्पा अवस्था कहते हैं। कारण शरीर में जीव के विद्यमान रहने पर मोद आदि वृत्तियों के द्वारा सत्त्व आनन्दमय स्थित रहती है तथा कारण देह को प्राप्त करने पर लिङ्गदेह विलीन हो जाता है।

सुखदुःखज्ञता तस्याहमो यस्माद्विलीनता ।
जीवः संस्कारवान् द्रष्टा केवलन्तत्र तिष्ठति ॥१३॥
तस्मात्सुषुप्तियुक्तस्यास्वाप्सं सुखमहम्परम् ।
अवेदिषन्नैव किञ्चिदिति संस्मरणं भवेत् ॥१४॥

उस अवस्था में उसे सुख दुःख का ज्ञान तो रहता है किन्तु उसका अहंभाव विलीन हो जाता है। उस समय वहाँ केवल संस्कार युक्त जीव द्रष्टा के रूप में स्थित रहता है। इसीलिए सुषुप्ति अवस्था से युक्त होने के बाद अर्थात् जगने के अनन्तर 'मैं अत्यन्त सुखपूर्वक सोया' और उस समय अन्य किसी बात का अनुभव नहीं हुआ, ऐसा उसे स्मरण होता है।

अन्नप्राणमयौ कोषौ मनोबुद्धिमयौ तथा ।
आनन्दमय इत्यैते कोषाः पञ्च प्रकीर्त्तिताः ॥१५॥

अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, बुद्धिमय और आनन्दमय ये पाँच कोश माने गये हैं।

पञ्चीकृतेभ्यो भूतेभ्यो देहस्थूलोऽन्नसंज्ञकः ।
लिङ्गे कर्मेन्द्रियैः पञ्चप्राणैः प्राणमय स्मृतः ॥१६॥

पञ्चीकृत महाभूतों से बना हुआ स्थूल देह अन्नमय कोश कहा जाता है तथा कर्मेन्द्रिय एवं पञ्चप्राण युक्त लिङ्ग शरीर प्राणमय कोश कहलाता है।

धीन्द्रियैःसात्त्विकैः सार्द्धं विमर्शात्मा मनोर्मयः ।
सार्द्धन्तैरेव विज्ञानमयो धीर्निश्चयात्मिका ॥१७॥

सत्त्व प्रधान ज्ञानेन्द्रिय एवं मन मिलकर मनोमय कोश कहलाते हैं। ज्ञानेन्द्रिय और मन के सहित निश्चयात्मक बुद्धि मिलकर विज्ञानमय कोश बनाते हैं।

लिङ्गे कोषास्त्रयो ज्ञेया गुणभेदात् पृथक् पृथक् ।
आनन्दमय इत्येकोऽविद्यायां कारणे स्मृतः ॥१८॥

पृथक् पृथक् गुणभेद से प्राणमय, मनोमय और विज्ञानमय कोश लिङ्ग शरीर में स्थित रहते हैं तथा आनन्दमय कोश कारणभूत अविद्या में स्थित रहता है।

तत्तत्कोषैस्तु तादात्म्यादात्मा तत्तन्मयो भवेत् ।
वासनासहितो जीवः पुनर्देहं विशत्यसौ ॥१९॥

भिन्न-भिन्न कोशों के साथ तादात्म्य होने से तत्तद रूप हो जाता है। वासना सहित वह जीव पुनः देह में प्रवेश करता है।

पुनः स्याज्जागरावस्था गृह्णात्यर्थान् विमोहितः ।
मनस्तिष्ठति भ्रूमध्ये कण्ठे बुद्धिः प्रकीर्त्तिता ॥२०॥

और जागरावस्था (जागृति अवस्था) को प्राप्त करता है। कालान्तर में सुषुप्त अवस्था (विमोहित) में मन भ्रूमध्य में (दोनों भ्रूओं के मध्य में) स्थित रहता है। बुद्धि का स्थान कण्ठ में कहा गया है।

हृदि चित्तं समाख्यातमहङ्कारश्च नाभिषु ।
य आत्मा सर्वगो नित्यो नानारूपेण भासते ॥२१॥

चित्त की स्थिति हृदय में बताई गयी है एवं अहंकार नाभि में स्थित रहता है। सर्वत्रगामी (सर्वव्यापक) आत्मा जो नित्य है, नाना रूपों में अवभासित होता है।

यन्मनाक् मननीशक्तिं धत्ते तन्मन उच्यते ।
मयेदं कर्म कर्त्तव्यं भोक्तव्यं कर्मणः फलम् ॥२२॥

इति निश्चयबुद्धिर्या सा बुद्धिः परिकीर्त्तिता ।
धारणाख्येन या वृत्तिस्तच्चित्तं परिकीर्त्तितम् ॥२३॥

जो मनन शक्ति धारण करता है उसे मन कहते हैं मुझे यह कर्म करना है, मुझे इस कर्म फल का भोग करना है इत्यादि निश्चयात्मक ज्ञान को बुद्धि कहते हैं साथ ही धारणात्मक, जो व्यापार है उसे चित्त कहते हैं।

अभिमानतया वृत्तिरहङ्कारः प्रकीर्त्तितः ।
एतद्विशिष्टं चैतन्यं जीवशब्देन कथ्यते ॥२४॥

अभिमान रूप से विद्यमान वृत्ति को अहंकार कहते हैं। इन सबसे अर्थात् प्राण मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार से विशिष्ट चैतन्य को जीव शब्द से अविहित किया जाता है।

अन्तर्वृत्तित्वमेतेषामिन्द्रियाणामपेक्षया ।
अतोऽन्तःकरणन्तेषामुच्यते योगवित्तमैः ॥२५॥

इन्द्रियों की अपेक्षा इनका व्यापार आन्तरिक हुआ करता है, अतः योगशास्त्र के विशिष्ठ विद्वानों द्वारा इन्हें अन्तःकरण कहा जाता है।

करणेनैव यस्तिष्ठेदन्तर्मध्ये निरन्तरम् ।
तदन्तःकरणं विद्यादिति तन्त्रविदो विदुः ॥२६॥

तन्त्रशास्त्र के विद्वानों के अनुसार जो अन्तः अर्थात शरीर के मध्य में करण के रूप में स्थित रहता है, उसे अन्तःकरण जानना चाहिए।

तस्योपरि दलं ध्यायेच्चतुःपञ्चाशसंख्यकम् ।
सप्तविंशतितत्त्वानि वायव्यानि प्रतिच्छदम् ।।२७।।

उस अन्तःकरण के ऊपर चौवन दल कमल (चौवन संख्यात्मक पत्रों से युक्त) का ध्यान करे। इस कमलदल पर प्रति पत्र वायव्य सत्ताइस तत्त्व विद्यमान रहते हैं।

द्विगुणं कल्पयित्वा तु शिवशक्तिप्रभेदतः ।
स्मरेत्तत्त्वानि कथ्यन्ते तन्मात्राः पञ्चसंख्यकाः ।।२८।।

भूतानि धीन्द्रियाणीति पञ्चकर्मेन्द्रियाणि तु ।
मनो बुद्धिरहङ्कारश्चित्तं काल इतीरितः ।।२९।।

प्रकृतिः पुरुषश्चेति सप्तविंशतिसंख्यकम् ।
शिवशक्तिरथो वक्ष्ये तत्तत्पत्रेषु या स्थिता ।।३०।।

इन सत्ताइस तत्त्वों को शिव और शक्ति के भेद से द्विवगुणित रूप कल्पना करके अर्थात् चौवन संख्या में उसका ध्यान करे। इनके पाँच तन्मात्राएँ, पाँच भूत पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, और पाँच कर्मेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, अहङ्कार चित्त, काल, प्रकृति और पुरुष ये सत्ताइस संख्या में तत्त्व हैं। शिव और शक्ति के रूप में भिन्न-भिन्न पात्रों, जो स्थित है उनका वर्णन अग्रिम पंक्तियों में किया जा रहा है।

खगेश्वरश्च भद्रा च कूर्माधारे प्रकीर्त्तितः ।
मेषः शोकाश्च मीनश्च मल्लिका ज्ञान एव च ।।३१।।

विमला च सदानन्दः शर्वरी तीव्र एव च ।
लीला प्रियश्च कुमुदा मैनाकी कालिकस्तथा ।।३२।।

डामरो डामरी विष्णू राकिनी परिकीर्त्तिता ।
नामश्च लाकिनी ज्ञेया कामश्च काकिनी तथा ।।३३।।

सामयः शाकिनी शक्तिर्हाकिनी च निकामरः ।
धारेशराके चक्रीशो बिन्दुः कुरवकाकले ।।३४।।

समया श्रीशकुब्जिके हृदीशकामकले तथा ।
शिरसः कुलदीर्घिका शिखेशोऽवचरा तथा ।।३५।।

चर्मी च बहुरूपा च अस्त्रेशश्च महत्तरी ।
परमगुरुर्मङ्गला च पराधिगुरुकौशले ॥३६॥

पूज्यगुरुश्च वामा च एताः स्युर्वासुरश्मयः ।
अष्टौ सिद्धिः प्रयच्छन्ति चिन्तिता रश्मयः स्तुताः ॥३७॥

खगेश्वर और भद्रा कूर्माधार में कहे गये हैं तथा मेष और शोका, मीन और मल्लिका, ज्ञान और विमला, सदानन्द और शर्वरी, तीव्र और लीला, प्रिय और कुमुदा, कालिक और मैनाकी, डामर और डामरी, विष्णु और राकिनी, नान और लाकिनी, काम और काकिनी, साम और शाकिनी शक्ति, निकामर और हाकिनी, धारेश और राका, चक्रीश और बिन्दु, कुरव और काकला, श्रीश और समया, हृदीश और कुब्जिका, काम और कला, शिरस (शिरसाईस ?) और कुलदीर्घिका, शिखेश और अवचरा, चर्मी और बहुरूपा, अस्त्रेश और महत्तरी, परमगुरु और मङ्गला, पराधिगुरु और कौशला, पूज्यगुरु और वामा ये चौवन पत्रों में निवास करने वाली शिव और शक्ति की रश्मियाँ हैं। इन रश्मियों का चिंतन करने पर आठो सिद्धियाँ (अणिमा, लघिमा, गणिमा प्राप्ति, प्राकाम्य ईशित्व और वशित्व) प्राप्त होती हैं।

अनाहतमिदञ्चक्रं यो जानाति नरोत्तमः ।[1]
अणिमाद्यष्टसिद्धीनामधिपः कविराड् भवेत् ॥३८॥

इस अनाहत चक्र को जो (श्रेष्ठ) महापुरुष जानता है वह अणिमा आदि आठ सिद्धियों का स्वामी और कविराज हो जाता है।

इति मैथिलश्रोत्रियश्रीबदरीनाथविरचितायां चक्रकौमुद्यां अनाहतचक्रविवृतिर्नाम चतुर्थः परिच्छेदः ।

इस प्रकार मैथिलश्रोत्रिय श्रीबदरीनाथ विरचित चक्रकौमुदी में अनाहतचक्रविवृति नामक चौथा परिच्छेद समाप्त हुआ।

—:०:—

तुलनीयः—१ योगीशो भवति प्रियात् प्रियतमः कान्ताकुलस्यानिशं
ज्ञानीशोऽपि कृती जितेन्द्रियगणो ध्यानावधानक्षमः ।
गद्यैः पद्यपदादिभिश्च सततं काव्याम्बुधारावहो ।
लक्ष्मीरङ्गणदैवतः परपुरे शक्तः प्रवेष्टुं क्षणात् ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, अनाहतचक्रम्, श्लोक २८]

[पञ्चमः परिच्छेदः]

[विशुद्धचक्रम्]

अथ वक्ष्ये विशुद्धाख्यं चक्रं नृणां विमुक्तये ।[1]
कण्ठे पद्मं षोडशारं स्वरैः षोडशभिर्युतम् ॥१॥

इसके अनन्तर विशुद्ध नामक चक्र का वर्णन करूँगा जो मनुष्यों को मुक्ति देने वाला है, कण्ठ में षोडशदल कमल स्थित है, जिसमें सोलह स्वर विद्यमान रहते हैं।

नभसो मण्डलं तस्मिन् वृत्ताकारं विधुप्रभम् ।
गजारूढं नभोरूपं हंवीजं ऋतुबाहुकम् ॥२॥

उसके नभोमण्डल में वृत्ताकार चन्द्रमा की प्रभा से युक्त गज पर आरूढ नभोरूप ऋतुरूपी बाहुओं वाला हं बीज विद्यमान है।

पाशाङ्कुशौ वराभीती दधत्तत्रास्ति शङ्करः ।[2]
पञ्चवक्त्रस्त्रिनेत्रश्च तुषारसदृशच्छविः ॥३॥

उसके ऊपर पाश, अंकुश, वर और अभय मुद्रा युक्त शङ्कर विराजते हैं जो पञ्चमुख त्रिनेत्र तथा तुषार के सदृश कान्ति वाले हैं।

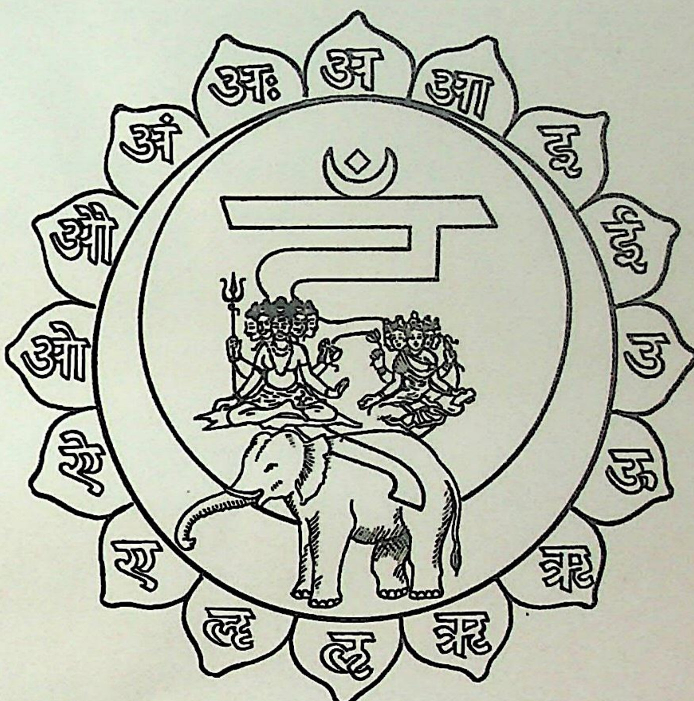
तुलनीयः—१. विशुद्धाख्यं कण्ठे सरसिजममलं धूमधूम्रावभासं
स्वरैः सर्वैः शोणैर्दलपरिलसितैर्दीपितं दीप्तबुद्धेः ।
समास्ते पूर्णेन्दुप्रथिततमनभोमण्डलं वृत्तरूपं
हिमच्छायानागोपरि लसिततनोः शुक्लवर्णाम्बरस्य ॥

[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, विशुद्धचक्रम्, श्लोक २९]

२. भुजैः पाशाभीत्यंकुशवरलसितैः शोभिताङ्गस्य तस्य
मनोरङ्के नित्यं निवसति गिरिजाभिन्नदेहो हिमाभः ।
त्रिनेत्रः पंचास्यो लसितदशभुजो व्याघ्रचर्माम्बराढ्यः
सदा पूर्वो देवः शिव इति च समाख्यानसिद्धप्रसिद्धः ॥

[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, विशुद्धचक्रम्, श्लोक ३०]

विशुद्धचक्रम्
(CAROTID PLEXUS)
षोडशदलपद्म



चित्रसंख्या : ६

कृपाणञ्च कपालञ्च त्रिशूलं टङ्कमेव च ।
वज्रं दावानलं पाशमभीतिनागराजकम् ।।४।।

अङ्कुशं दिव्यघण्टाञ्च दधच्चर्मावृतः शिवः ।
एवं ध्येयो विश्वनाथो भुक्तिमुक्तिप्रदायकः ।।५।।

वे (शिव) कृपाण, कपाल, त्रिशूल, टङ्क, वज्र, दावानल, पाश, अभीति, नागराज, अंकुश और दिव्य घण्टा को धारण किए हुए, तथा चर्म से आवृत्त हैं। इस रूप में विश्वनाथ (शिव) का ध्यान करना चाहिए जिसके फलस्वरूप वे भोग और मोक्ष प्रदान करते हैं।

तद्वामे शाकिनीशक्तिः शूलपाशं शरं धनुः ।[1]
धारयन्ती तदा ध्येया सुधांशोर्मण्डलन्ततः ।।६।।

उनके वायीं ओर सदा ध्यान करने योग्य शाकिनी शक्ति शूल, पाश, वाण और धनुष धारण किये हुए विद्यमान रहती हैं और उसके अनन्तर चन्द्रमण्डल है।

कर्णिकायां सुनिर्वाणतत्त्वामृतसमुज्वलम् ।
निधाय चित्तमत्रैव प्रकाशात्मा ततो भवेत् ।।७।।

इस चक्र की कर्णिका में निर्वाण तत्त्वामृत से समुज्वल चित्त को संस्थापित करके प्रकाशात्म भाव को प्राप्त करे।

ततो द्विसप्ततिदलं ध्यायेत्तदुपरिस्थितम् ।
षट्त्रिंशद्व्योमतत्त्वानि शिवशक्तिप्रभेदतः ।।८।।

उसके ऊपर स्थित बहत्तर दलों वाले (कमल) का ध्यान करे जिसमें शिव और शक्ति के भेद से छत्तीस आकाश के तत्त्व स्थित रहते हैं।

तुलनीयः—१. सुधासिन्धोः शुद्धा निवसति कमले शाकिनी पीतवस्त्रा
शरं चापं पाशं सृणिमपि दधती हस्तपद्मैश्चतुर्भिः ।
सुधांशोः सम्पूर्णं शशपरिरहितं मण्डलं कर्णिकायां
महामोक्षद्वारं श्रियमभिमतशीलस्य शुद्धेन्द्रियस्य ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, विशुद्धचक्रम्, श्लोक ३१]

द्विगुणं कल्पयित्वा तु प्रतिपत्रं विभावयेत् ।
व्योमतत्त्वानथो वक्ष्ये शिवशक्तिशिवेश्वरान् ॥९॥

इन छत्तीस व्योम तत्त्वों को पूर्वोक्त शिव और शक्ति भेद से द्विगुणित करके प्रतिपत्र पर उनकी विभावना करे। इसके अनन्तर शिव-शक्ति और ईश्वर के सम्बन्ध में कथन करूँगा।

शुद्धविद्या च माया च कलाविद्या तथा स्मृता ।
रागः कालश्च नियतिः पुरुषः प्रकृतिस्तथा ॥१०॥
अहङ्कारश्च बुद्धिश्च मनो ज्ञानेन्द्रियाणि तु ।
कर्मेन्द्रियाणि शब्दश्च स्पर्शो रूपं रसस्तथा ॥११॥
गन्धो भूतानि पञ्चापि तत्त्वान्येतानि भावयेत् ।
शिवशक्तिरथो वक्ष्ये द्विसप्ततिदलस्थिता ॥१२॥

शुद्धविद्या, माया, कला-विद्या, राग, काल, नियति, पुरुष, प्रकृति, अहंकार, बुद्धि, मन, ज्ञानेन्द्रियाँ, कर्मेन्द्रियाँ शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, ये पाँच भूत इन तत्त्वों की कामना करे। इसके अनन्तर बहत्तर दलों में शिव और शक्ति का कथन करूँगा।

हृदयः कालिकी चैव धरः कान्ता प्रकीर्त्तिता ।
भोगः शिवेश्वरीश्चैव उभयो योगिनी तथा ॥१३॥
महश्च पद्मरागा च शर्वश्च शबरी तथा ।
द्रवश्च कालिका चैव रश (स?) श्च परिकीर्त्तितः ॥१४॥
जुष्टचाण्डाली मोहश्च अघोरास्या मनोभवः ।
हेला महाकुलश्चैव लाकिनी परिकीर्त्तिता ॥१५॥
ज्ञानगुह्यं कुब्जिका च खेचरो डाकिनी तथा ।
ज्वलनो राकिनी चैव महाकूलश्च लाकिनी ॥१६॥
भीयोज्वलः काकिनी च तैजसः शाकिनी तथा ।
मूर्द्धा च हाकिनी वायुः पापघ्निः कुल एव च ॥१७॥
सिंहा संहार इत्येव तथा चैव कुलाम्बिका ।
विश्वेश्वरश्च कामा च कोटिलः काममातृका ॥१८॥

गालवश्चैव काङ्काली व्योमो व्योम प्रकीर्त्तिता ।
श्वसनश्च तथानन्दा महादेवी च खेचरः ॥१९॥
महत्तरी बाहुलौ च तातः कुण्डलिनी तथा ।
कुलातीतः कुलेशी च अजश्च गन्धिका तथा ॥२०॥
मननः पीडिका ईशो रेचिका परिकीर्त्तिता ।
शिखश्च णेचिका चैव परमश्च तथा परा ॥२१॥
परश्च दितिप्रोक्ताश्च नाभसाः शिवशक्तयः ।
शुद्धस्फटिकसङ्काशा द्विसप्ततिदलस्थिताः ॥२२॥

हृदय कालिकी, धर, कान्ता, भोग, शिवेश्वरी, दोनों की योगिनियाँ, मह, पद्मरागा, शर्व, शबरी, द्रव, कालिका, रस, जुष्टचाण्डाली, मोह, अघोरा, मनोभव, हेला, महाकुल, लाकिनी, ज्ञानगुह्य, कुब्जिका, खेचर, डाकिनी, ज्वलन, राकिनी, महाकूल, लाकिनी, भीयोज्वल, काकिनी, तैजस, शाकिनी, मूर्धा, हाकिनी वायु, पापघ्नी, कुल, सिंहा, संहार, कुलाम्बिका, विश्वेश्वर, कामा, कोटिल, कामभात्रिका गालव, काङ्काली, व्योम, व्योमा, स्वशन, आनन्दा, खेचर, महादेवी, बाहुल, महत्तरी, तात, कुण्डलिनी, कुलालीत, कुलेशी, अज, गन्धिका, मनन, पीडिका, ईश, रेचिका, शिव, णेचिका, परम, परा, पर और दिति ये व्योम बहत्तर शिव शक्तियाँ हैं जो शुद्ध स्फटिक के सदृश बहत्तर दलों पर स्थित है।

यो भावयेद् विशुद्धाख्यं शिवशक्तिसमन्वितम् ।[1]
सोऽष्टसिद्धिपतिर्भूयादिति शङ्करभाषितम् ॥२३॥

जो व्यक्ति शिव और शक्ति से युक्त इस विशुद्ध नामक चक्र की भावना करता है वह आठो सिद्धियों का स्वामी हो जाता है ऐसा शंकर ने कहा है।

इति मैथिलश्रोत्रियश्रीबदरीनाथविरचितायां चक्रकौमुद्यां विशुद्धचक्रविवृतिर्नाम पञ्चमः परिच्छेदः ।

इस प्रकार मैथिलश्रोत्रिय श्रीबदरीनाथ विरचित चक्रकौमुदी में विशुद्धचक्र विवृति नामक पाँचवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ।

तुलनीयः—१. इह स्थाने चित्तं निरवधि विनिधायात्मसम्पूर्णयोगः
कविर्वाग्मी ज्ञानी स भवति नितरां साधकः शान्तचेताः ।
त्रिकालानां दर्शी सकलहितकरो रोगशोकप्रमुक्तः
चिरञ्जीवी जीवी निरवधिविपदां ध्वंसहंसप्रकाशः ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः विशुद्धचक्रम्, श्लोक ३२]

षष्ठः परिच्छेदः

[आज्ञाचक्रम्]

आज्ञाचक्रमथो वक्ष्ये हक्षयुक्तं दलद्वयम् ।[1]
भ्रुवोर्मध्ये शुभ्रवर्णं हाकिनी शक्ति संयुतम् ।।१।।

प्रदीप्तममृतस्राविं लात्मिका कर्णिकान्वितम् ।
ध्येया तु हाकिनीशक्तिश्चन्द्रकान्तिसमप्रभा ।।२।।

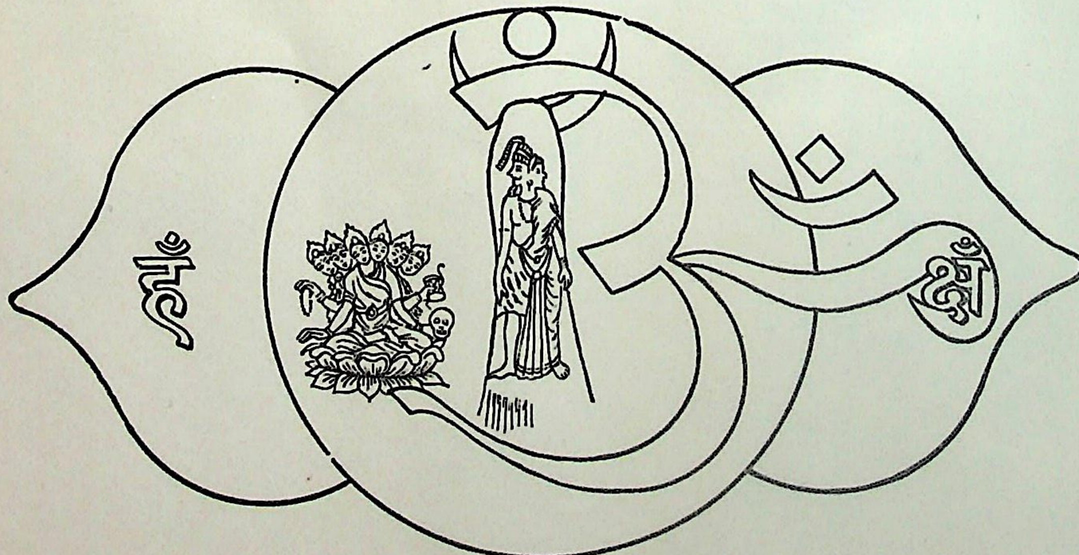
इसके अनन्तर मैं आज्ञाचक्र का कथन करूँगा जो ह और क्ष अक्षरों से युक्त दो दलों वाला है। दोनों भ्रुवों के मध्य शुभ्रवर्ण हाकिनी शक्ति से युक्त प्रदीप्त अमृत का स्रवण करने वाले ल वर्ण से युक्त कर्णिका से युक्त है। चन्द्र के समान कान्ति से युक्त इस हाकिनी शक्ति का ध्यान करना चाहिए।

ज्ञानमुद्रां कपालञ्च डिण्डिमञ्च सृजं करैः ।
दधानाधोमुखी नित्या योगगम्यतिसुन्दरी ।।३।।

यह शक्ति ज्ञानमुद्रा, कपाल, डिण्डिम और माला को हाथ में धारण किये हुए नित्य अधोमुखी और अत्यन्य सुन्दरी योगगम्या हैं।

तुलनीयः—१. आज्ञानामाम्बुजतद्धिमकरसदृशं ध्यानधामप्रकाशं
हक्षाभ्यां वै कलाभ्यां परिलसितवपुर्नेत्रपत्रं सुशुभ्रम् ।
तन्मध्ये हाकिनी सा शशिसमधवला वक्त्रषट्कं दधाना
विद्यां मुद्रां कपालं डमरुजपवटीं बिभ्रती शुद्धचित्ता ।।
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, आज्ञाचक्रम्, श्लोक ३३]

आज्ञाचक्रम्
(MEDULLA)
द्विदलपद्म



चित्रसंख्या : ७

प्रदीपकलिकाकारं मनोऽत्रास्तेऽतिनिर्मलम् ।[1]
लिङ्गन्तत्कर्णिकान्तस्थं त्रिकोणमतिसुन्दरम् ॥४॥
सौदामिनीसमं तस्मिन् वेदादिं संस्मरेद् बुधः ।
तस्मिन् प्रदीपसदृशोऽप्यन्तरात्मा व्यवस्थितः ॥५॥
सच्चिदानन्दरूपोऽसौ योगिध्येयः सनातनः ।
अथ चक्रोपरि ध्यायेत् चतुःषष्टिदलानि तु ॥६॥
तेषु मानसतत्त्वानि द्वात्रिंशत्संख्यकानि च ।
द्विगुणं कल्पयित्वा तु शिवशक्तिप्रभेदतः ॥७॥

इसमें अत्यन्त निर्मल प्रदीप्तकलिका के आकृति वाला मन स्थित रहता है। इसकी कर्णिका के अन्दर स्थित अति सुन्दर त्रिकोण अति सुन्दर विद्युत के समान वेदों के आदिभूत लिङ्ग का स्मरण करे। उसमें ही प्रदीप के सदृश अन्तरात्मा व्यवस्थित है।

यह अन्तरात्मा सच्चिदानन्द रूप सनातन योगियों द्वारा ध्यान योग्य है।

इसके अनन्तर चक्र के ऊपर (६४) चौंसठ दलों का ध्यान करे। उन पर मानस तत्त्वों को शिव-शक्ति के भेद से द्विगुणित करके ध्यान करे

अथ मानसतत्त्वानि वक्ष्यन्ते क्रमशोऽधुना ।
आदौ परा चतुर्द्धा स्यात् द्वितीयेच्छा च पञ्चधा ॥८॥
त्रयी ज्ञानचतुर्द्धैव चतुर्थी सप्तधा क्रिया ।
पञ्चमी कुण्डली द्विर्द्विः षष्ठी स्यान्मातृकाऽष्टधा ॥९॥

इसके अनन्तर अब क्रमशः मानस तत्त्वों का कथन किया जायेगा। सर्व प्रथम चार प्रकार की पराशक्ति उसके अनन्तर पाँच प्रकार की इच्छाशक्ति, तीसरी चार प्रकार की ज्ञानशक्ति, चौथी सात प्रकार की क्रियाशक्ति, पाँचवी दो-दो प्रकार की कुण्डली शक्ति और छठी आठ प्रकार की मातृकाशक्ति (ये बत्तीस मानस तत्त्व हैं)।

तुलनीयः—१. एतत्पद्मान्तराले निवसति च मनः सूक्ष्मरूपं प्रसिद्धं
योनौ तत्कर्णिकायामितरशिवपदं लिङ्गचिह्नप्रकाशम् ।
विद्युन्मालाविलासं परमकुलपदं ब्रह्मसूत्रप्रबोधम्
वेदानामादिबीजं स्थिरतरहृदयश्चिन्तयेत्तत् क्रमेण ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, आज्ञाचक्रम्, श्लोक ३४]

परा पश्यन्ती मध्यमा च बैखरीति प्रभेदतः ।
चतुर्द्धैव पराशक्तिर्विज्ञेया योगिभिः सदा ॥१०॥

परा वाङ्मूलचक्रस्था पश्यन्ती नाभिमध्यगा ।
मध्यमा हृदयस्था च कण्ठस्था बैखरी मता ॥११॥

परा, पश्यन्ती, मध्यमा और बैखरी भेद से योगी लोग पराशक्ति को चार प्रकार की मानते हैं। इनमें से मूलवाणी परा है। नाभि चक्र में स्थित वाक्तत्त्व को पश्यन्ती, हृदयस्थ वाक्तत्त्व को मध्यमा तथा कण्ठस्थ वाक्तत्त्व को बैखरी कहते हैं।

उपकर्तुं प्रतिकर्तुं कर्तुं कारयितुं तथा ।
उदासितुञ्चेति भेदादिच्छाशक्तिस्तु पञ्चधा ॥१२॥

उपकार की इच्छा, प्रतिकार की इच्छा, करने की इच्छा, कराने की इच्छा और विरति की इच्छा भेदों से इच्छाशक्ति पाँच प्रकार की होती है।

ज्ञानशक्तिश्चतुर्द्धैव ज्ञानन्तु द्विविधं स्मृतम् ।
निरालम्बनं सालम्बनं चिद्रूपेणालम्बनं भवेत् ॥१३॥

ज्ञानशक्ति भी चार प्रकार की ही है। सर्वप्रथम ज्ञान दो प्रकार का है- निरालम्बन और स्वालम्बन। यहाँ आलम्बन चिद्रूप से हुआ करता है।

ज्ञातृज्ञेयज्ञप्तिभेदैः सालम्बं त्रिविधं स्मृतम् ।
अहं त्वं च मदीयञ्च त्वदीयमिति यद् भवेत् ॥१४॥

अहंकारास्पदत्वाच्च चिद्रूपं रहितं यतः ।
अतश्चतुष्टयं तत्तु निरालम्बमुदाहृतम् ॥१५॥

ज्ञात, ज्ञेय और ज्ञप्ति भेद से सालम्बन ज्ञान तीन प्रकार का है। मैं, तुम, मेरा और तुम्हारा इत्यादि प्रकार के जो ज्ञान हैं वह अहंकारास्पद है। अतः वह चिद्रूप रहित है। इन चारों प्रकार के ज्ञान को निरालम्बन ज्ञान कहते हैं।

एतच्चतुष्टयं विद्याद् निरालम्बञ्च पत्रगम् ।
इष्टापूर्त्तञ्च स्वाध्यायो जपः पूजा तपस्तथा ॥१६॥
दानञ्चेति प्रकारेण क्रियाशक्तिस्तु सप्तधा ।
उन्नयश्च लयश्चैव प्रत्यावृत्तिस्तथैव च ॥१७॥
विश्रान्तिरिति भेदेन चतुर्द्धा कुण्डली स्मृता ।
मातृका त्वष्टधा ज्ञेया वर्गाष्टकविभेदतः ॥१८॥
अवर्गः षोडशो वर्णः कवर्गः पञ्चवर्णकः ।
चवर्गः पञ्चवर्णः स्याट्टवर्गः पञ्चवर्णकः ॥१९॥
तवर्गः पञ्चवर्णः स्यात् पवर्गः पञ्चवर्णकः ।
यवर्गश्च चतुर्वर्णः शवर्गो रसवर्णकः ॥२०॥

चारों प्रकार का उपर्युक्त ज्ञान और निरालम्ब ज्ञान पत्र में स्थित रहता है। इष्टापूर्त (कुआँ, धर्मशाला इत्यादि बनाना) स्वाध्याय, जप, पूजा, तप और दान भेद से क्रियाशक्ति सात प्रकार की है।

उन्नय, लय, प्रत्यावृत्ति और विश्रान्ति भेद से कुण्डली चार प्रकार की मानी जाती है।

वर्गों में आठ भेद होने से मातृका आठ प्रकार की मानी जाती है, । अवर्ग जिसमें सोलह वर्ण हैं, कवर्ग में पाँच वर्ण हैं, चवर्ग में पाँच वर्ण हैं, टवर्ग में पाँच, वर्ण, तवर्ग में पाँच वर्ण हैं, पवर्ग में पाँच वर्ण हैं तथा यवर्ग में चार वर्ण तथा शवर्ग में रस अर्थात् ६ वर्ण हुआ करता है।

शिवशक्तीरथो वक्ष्ये चतुःषष्टिदलस्थिताः ।
भवः पराभवो भवेद्[1] यथा चित् चित्परा स्मृता ॥२१॥
महामाया तथा प्रोक्ता महामाया तथापरा ।
इच्छा इच्छापरा सृष्टिस्तथा सृष्टिपरा स्मृता ॥२२॥
सदसत् सदसत्परा क्रिया क्रियापरा स्मृता ।
आत्मा आत्मपरा चैव इन्द्रियाश्रय एव च ॥२३॥

—१. यज्ञः पराभव भवे (मूलपाठ)

इन्द्रियाश्रयपरा चैव गोचरो गोचरपरा ।
लोकमुख्यो लोकमुख्यपरा वेदतत्त्वं वेदतत्त्वपरा ॥२४॥

संवित् संवित्परा चैव कुण्डली कुण्डलीपरा ।
सौषुम्णः सौषुम्णपरा[1] प्राणसूत्रः प्राणसूत्रपरा ॥२५॥

स्पन्दः स्पन्दपरा चैव मातृका मातृकापरा ।
स्वरोद्भवः स्वरोद्भवपरा वर्णजः वर्णजपरा ॥२६॥

शब्दजः शब्दजपरा वर्णजः वर्णजपरा ।
वर्गजः वर्गजपरा संयोगः संयोगपरा ॥२७॥

मन्त्रविग्रहः मन्त्रविग्रहा चतुःषष्टिरुदाहृता ।
एता हि रश्मयो ज्ञेया मानसाः पत्रसंस्थिताः ॥२८॥

इसके अनन्तर चौंसठ दलों में स्थित शिव और शक्तियों का वर्णन करूँगा । भव-पराभव, चित्-चित्परा, महामाया-महामायापरा, इच्छा-इच्छापरा, सृष्टि-सृष्टिपरा, सद-सदपरा, सत्-सत्परा, क्रिया-क्रियापरा, आत्मा-अत्मपरा, इन्द्रिय-इन्द्रियपरा, आश्रय-आश्रयपरा, गोचर-गोचरपरा, लोक-लोकपरा, मुख्य-मुख्यपरा, वेद-वेदपरा, तत्त्व-तत्त्वपरा, संवित्-संवित्परा, कुण्डली-कुण्डलीपरा, सौषुम्ण-सौषुम्णपरा, प्राण-प्राणपरा, सूत्र-सूत्रपरा, स्पन्द-स्पन्दपरा, मातृका-मातृकापरा, स्वर-स्वरपरा, उद्भव-उद्भवपरा, वर्णज-वर्णजपरा, शब्दज-शब्दजपरा, वर्णज-वर्णजपरा, वर्गज-वर्गजपरा, संयोग-संयोगपरा, मन्त्र-मन्त्रपरा, विग्रह-विग्रहपरा ये शिव और शक्ति के भेद से चौंसठ भेद होते हैं ।

ये मानस-रश्मियाँ हैं जो प्रत्येक पत्र पर स्थित हैं ।

परातो जायते चेच्छा सा च व्योमपतिः स्मृता ।
षट्त्रिंशन्नायकाः प्रोक्ताः कण्ठस्थानं समाश्रिताः ॥२९॥

इच्छा की उत्पत्ति परा से होती है और उसे व्योम का स्वामी माना जाता है । इसके कण्ठस्थान में छत्तीस नायक हैं ।

---

१. सौद्युम्नः सौद्युम्नपरा (मूलपाठ)

इच्छातो जायते ज्ञाना सा च वायोरधीश्वरी ।
षड्[1]विंशति रश्मीनां पतिः सानाहताश्रया ॥३०॥

इच्छा से ज्ञानशक्ति उत्पन्न होती है और वह शक्ति वायु की अधीश्वरी है । यह अनाहत आश्रित है तथा छब्बीस रश्मियों की स्वामी है ।

ज्ञानातो भूतक्रिया व्यक्ता साम्यात्सलिलनायिका ।
षड्विंशतिरश्मीनां स्वाधिष्ठानं समाश्रिता ॥३१॥

ज्ञानशक्ति से भूतक्रिया व्यक्त होती है । यह जल के सदृश गतिशील होने से सलिल नायिका कहलाती है । स्वाधिष्ठानचक्र पर आश्रित यह शक्ति छब्बीस रश्मियों की स्वामिनी हैं ।

कुण्डल्या मातृका जाता सा क्षितेरीश्वरी मता ।
अष्टाविंशतिरश्मीनामधिपाधारमाश्रिता ॥३२॥

कुण्डली से मातृका की उत्पत्ति होती है उसे क्षितेश्वरी माना जाता है । यह अट्ठाइस रश्मियों की स्वामिनी हैं तथा आधारचक्र पर आश्रित रहती हैं ।

शिवशक्तिविभागेन द्विविधा सोभया[2] ज्ञेया[3] ।
षष्ठ्युत्तरञ्च त्रिशतमेवं शम्भुमरीचयः ॥३३॥

ये दोनों ही शक्तियाँ, शिव और शक्ति के भेद से दो-दो प्रकार की समझनी चाहिए । इस प्रकार शम्भु की रश्मियाँ तीन सौ साठ होती हैं ।

तासां स्मरणमात्रेण जीवन्मुक्तो भवेन्नरः ।
सर्वासां स्मरणाशक्तस्तासामेकामपि स्मरेत् ॥३४॥

इसके स्मरण मात्र से मनुष्य जीवन मुक्त हो जाता है । इन सब के स्मरण में अशक्त होने की स्थिति में उनमें से किसी एक का भी स्मरण करे ।

---

१. सप्त (मूलपाठ)
२. शोभया (मूलपाठ)
३. ज्ञया (मूलपाठ)

तासां पूजनतो नृणां ब्रह्महत्यादि नश्यति ।
लक्ष्मीवान् ध्यानतोऽवश्यं रश्मिसंघे वशेन्नरः ॥३५॥

उनके पूजन से मनुष्य के ब्रह्महत्या इत्यादि पाप नष्ट हो जात हैं। और वह लक्ष्मीवान हो जाता है। तथा उनके ध्यान से रश्मिसंघ में निवास करता है।

हेमन्ताद्याश्च ऋतवः षट्चक्रे क्रमशः स्थिताः ।
संवत्सरात्मकं देहं खत्वाग्नि शिवशक्तिकम् ॥३६॥

यह संवत्सरात्मक षट्चक्र जिसमें हेमन्त आदि ऋतुएँ क्रमशः स्थित हैं, उसका शरीर है, उसमें आकाश और अग्नि शिव शक्ति के रूप में है।

यदि साम्वत्सरीपूजामिच्छेत् साधकनन्दनः ।
षष्टित्रिशत्[1]पत्रस्थाः शिवशक्तीः प्रपूजयेत् ॥३७॥

यदि साधक साम्वत्सरी पूजा करना चाहे तो तीन सौ साठ पत्रों में स्थित शक्ति की पूजा करे।

एतत्पूजनतो देव्याः पूजा साम्वत्सरी भवेत् ।
शान्तिवश्यस्तम्भनानि विद्वेषोच्चाटने ततः ॥३८॥
मारणान्तानि शंसन्ति षट्कर्माणि मनीषिणः ।
यदा समारभेद् भक्तः षट्कर्माणि सुसंयतः[2] ॥३९॥
मन आकृष्य विषयात्तत्तचक्रे चिरं नयेत् ।
षट्पञ्चाशद्दलं भूमौ द्विपञ्चाशद्दलं दले ॥४०॥
द्विषष्टिपत्रमनले चतुःषष्टिदलं परे ।
द्विसप्ततिदलं शून्ये चतुःषष्टिदलं परे ॥४१॥

इनकी पूजा से देवी की साम्वत्सरी पूजा होती है। शान्ति, वशीकरण, स्तम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन, मारण ये छः कर्म भी मनुष्य को सिद्ध हो जाते हैं।

---

१. त्रिशत् (मूलपाठ)
२. सुसंयुतः (मूलपाठ)

देवी का भक्त जब इन षट्चक्रों को प्रारम्भ से उस समय सुसंयत होकर विषयों से मन को आकृष्ट करके चिर काल तक प्रतिष्ठित करे।

इस चक्र में भूमि पर अर्थात् सबसे नीचे छप्पन दल, उससे ऊपर उन दलों पर बावन दल, उससे ऊपर अनल में बासठ दल, उससे ऊपर चौंसठ दल, उससे ऊपर शून्य में बहत्तर दल तथा उससे ऊपर चौंसठ दल होते हैं।

बहुभिः पुण्यसंघेन जागर्ति कुलकुण्डली।
नयेत् क्रमेण षट्चक्रं ततः षट्सिद्धिवाग्भवेत् ॥४२॥

इस प्रकार की कुलकुण्डली बहुत पुण्य समूह से जागृत होती है। इन षट्चक्रों में कुण्डली को क्रमशः जागृत करे। इससे छओ सिद्धियाँ प्राप्त होती है।

आज्ञाचक्रमिदं प्रोक्तं शिवशक्तिसमन्वितम्।[1]
यो जानाति नरः सम्यक् ब्रह्मज्ञानी स उच्यते ॥४३॥

यह शिवशक्ति से युक्त आज्ञाचक्र है। इसे जो व्यक्ति भली भाँति जानता है, उसे ब्रह्मज्ञानी कहते हैं।

इतिमैथिलश्रोत्रियश्रीबदरीनाथविरचितायां चक्रकौमुद्यां आज्ञाचक्रविवृतिर्नाम षष्ठः परिच्छेदः ॥६॥

इस प्रकार मैथिलश्रोत्रय श्री बदरीनाथ विरचित चक्रकौमुदी में आज्ञाचक्र विवृति नामक छठवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ।

—:०:—

तुलनीयः —१. इह स्थाने विष्णोरतुलपरमामोदमधुरे
समारोप्य प्राणं प्रमुदितमनाः प्राणनिधने।
परं नित्यं देवं पुरुषमजमाद्यं त्रिजगतां
पुराणं योगीन्द्रः प्रविलसति वेदान्तविदितम् ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, आज्ञाचक्रम्, श्लोक ३६]

सप्तमः परिच्छेदः

[सहस्रारचक्रम्]

आज्ञाचक्रादूर्ध्वभागेऽप्यर्द्धचन्द्रसितोज्ज्वलम् ।[1]
तत ऊर्ध्वं बिन्दुरूपं मकारशिवमन्दिरम् ॥१॥

आज्ञाचक्र से ऊपर के भाग में श्वेत, उज्वल अर्द्धचन्द्र स्थित है। उसके ऊपर बिन्दु रूप में मकार स्थित है जो कि शिव-मन्दिर कहा जाता है।

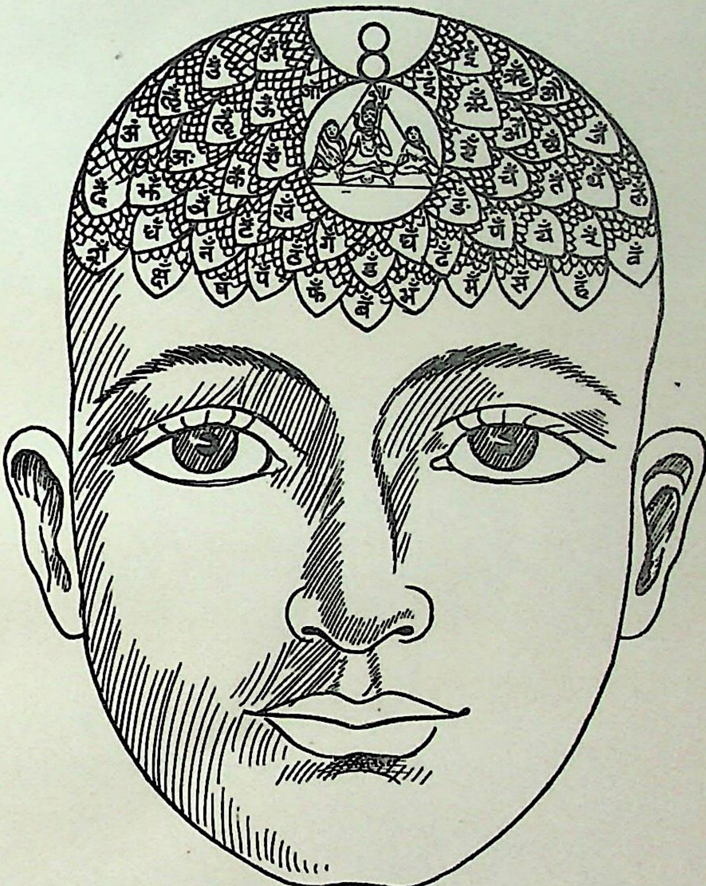
तत ऊर्ध्वं महासूक्ष्मं नादं विष्णुस्वरूपकम् ।[2]
अत ऊर्ध्वं सहस्रारपद्मं शिरसि संस्थितम् ॥२॥

उससे ऊपर अत्यन्त सूक्ष्म विश्व स्वरूप नाद स्थित है। उससे भी ऊपर शिर पर सहस्र दल कमल प्रतिष्ठित है।

तुलनीयः—१. लयस्थानं वायुस्तदुपरि च महानादरूपं शिवार्द्धं
शिवाकारं शान्तं वरदमभयं शुद्धबुद्धिप्रकाशम् ।
यदा योगी पश्येद् गुरुचरणयुगाम्भोजसेवासुशील-
स्तदा वाचां सिद्धिः करकमलतले तस्य भूयात् सदैव ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, सहस्रारचक्रम्, श्लोक ४०]

२. तदूर्ध्वं शंखिन्या निवसति शिखरे शून्यदेशे प्रकाशं
विसर्गाधः पद्मं दशशतदलं पूर्णचन्द्रातिशुभ्रम् ।
अधोवक्त्रं कान्तं तरुणरविकलाकान्तिकिञ्जल्कपुञ्जं
ललाटाद्यैर्वर्णैः प्रविलसितवपुः केवलानन्दरूपम् ॥
समास्ते तस्यान्तः शशपररहितः शुद्धसम्पूर्णचन्द्रः
स्फुरज्ज्योत्स्नाजालः परमरसचयस्निग्धसन्तानहासी ।
त्रिकोणं तस्यान्तः स्फुरति च सततं विद्युदाकाररूपं
तदन्तः शून्यं तत् सकलसुरगणैः सेवितश्चातिगुप्तम् ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, सहस्रारचक्रम्, श्लोक ४१-४२]

सहस्रारचक्रम्
(BRAIN)
सहस्रदलपद्म



चित्रसंख्या : ८

रक्तवर्णं मातृकार्णैं [?] विंशत्यावर्तकैर्युतम् ।
अधोमुखदलं तस्मिन् आस्ते पूर्णविधुः स्फुरन् ।।३।।

जो रक्तवर्ण मातृकावर्णों [?] तथा बीस आर्वत्तकों से युक्त है। उसमें अधोमुख दल वाला पूर्ण चन्द्र स्फुरित होता है

अकथादित्रिरेखाभिस्त्रिकोणन्तत्र भावयेत् ।
त्रिषु कोणेषु त्रीन् हलधान्[1] चिन्तयेत्क्रमात् ।।४।।

उसमें अ, क और थ वर्णों से प्रारम्भ होने वाली तीन रेखाओं से युक्त त्रिकोण की भावना वर्णों ह, ल और ध का क्रमशः चिन्तन करे।

तन्मध्ये कन्दमेकन्तु रवीन्द्वग्निसमप्रभम् ।
तन्मध्ये गुरुमन्त्रञ्च द्वादशाक्षरसंख्यकम् ।।५।।

उसके मध्य में रवि और अग्नि के समान कान्तिमान एक कन्द का ध्यान करे। उसके मध्य में द्वादश अक्षर वाले गुरु मन्त्र का ध्यान करे।

वाग्भवं प्रथमं प्रोच्य मायां लक्ष्मीं ततः परम् ।
हसखफ्रें समुच्चार्य हसक्षमलवरयुं तथा ।।६।।

सर्व प्रथम वाग्भव अर्थात् प्रणव का उच्चारण करके माया अर्थात् लक्ष्मी का उच्चारण करे, उसके बाद हसखफ्रें का उच्चारण करे तदनन्तर ह स क्ष म ल व र युं का उच्चारण करे।

---

१. हलध्यान् (?)

द्वादशाक्षरमन्त्रोऽयं गुरोर्मोहान्धनाशकृत् ।[1]
अथवा स्त्रीगुरोर्मन्त्रं वाग्भवं तत्र संस्थितम् ॥७॥

तत्रैव मनसा पूज्य गुरुं सर्वार्थसिद्धिदम् ।
जपेद् गुरुमनुं प्रातरष्टोत्तरशतं सुधीः ॥८॥

स्वेष्टदेवीञ्च मनसा संपूज्य विधिवन्नरः ।
तत ऊर्ध्वं बुधो ध्यायेत् सूर्यमण्डलमुत्तमम् ॥९॥

यह द्वादशाक्षर मन्त्र है जो गुरु के मोह अन्धकार को दूर करता है। अथवा साधक स्त्री वहाँ पर स्थित गुरु का मन से पूजन करके सर्वार्थ सिद्धि देने वाले ओंकार सहित गुरु मन्त्र का जप करे। उसके अनन्तर प्रातः एक सौ आठ बार गुरु का, अपनी इष्ट देवी का मन से विधिवत् पूजन करके उत्तम सूर्यमण्डल का ध्यान करे।

ततश्च मण्डलं ध्यायेच्चन्द्रस्य मण्डलम्महत् ।
महावायुं ततो ध्यायेद् ब्रह्मरन्ध्रन्ततः परम् ॥१०॥

उसके अनन्तर चन्द्र के विशाल मण्डल का ध्यान करे, उसके अनन्तर महावायु का ध्यान करके तदनन्तर ब्रह्मरन्ध्र का ध्यान करे।

तुलनीयः—१. सुगुप्तं तद् यत्नादतिशयपरमामोदसन्तानराशेः
परं कन्दं सूक्ष्मं सकलशशिकलाशुद्धरूपप्रकाशम् ।
इह स्थाने देवः परमशिवसमाख्यानसिद्धः प्रसिद्धः
स्वरूपी सर्वात्मा रसविरसमितोऽज्ञानमोहान्धहंसः ॥
सुधाधारासारं निरवधि विमुञ्चन्नतितरां
यतेः स्वात्मज्ञानं दिशति भगवान् निर्मलमतेः ।
समास्ते सर्वेशः सकलसुखसन्तानलहरी
परीवाहो हंसः परम इति नाम्ना परिचितः ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, सहस्रारचक्रम्, श्लोक ४३-४४]

तत्कर्णिकायां हंसन्तु निर्मलं भावयेत्सुधीः ।
ततोऽतिसूक्ष्मा महती कला[1] चन्द्रस्य निर्मला ।।११।

उस सहस्र दल कमल की कर्णिका में निर्मल हंस की भावना करे । उसके बाद अत्यन्त सूक्ष्म महती चन्द्र की निर्मल कला की भावना करे ।

अधोमुखा तु तन्मध्ये निर्वाणाख्यकला स्मृता ।[2]
अर्द्धचन्द्रसमा नित्याऽप्यधो वक्षेति [?][3] सूक्ष्मिका ।।१२।।

उसके मध्य में अधोमुख निर्वाण नामक कला कही गई है । जो अर्द्धचन्द्र सदृश नित्य अधोवक्ष और अति सूक्ष्म है ।

तन्मध्ये कोटिचन्द्रार्कविद्युत्कान्तिसमा स्मृता ।
निर्वाणशक्तिः परमा परमाणुसमा सती ।।१३।।

उसके मध्य में कोटि, चन्द्र, सूर्य और विद्युत की कान्ति के सदृश निर्वाण शक्ति कही गई है । जो परमाणु के समान सूक्ष्म होते हुए भी सबसे उत्कृष्ट है ।

विश्वैकबीजं विबुधा महस्तत्प्रवदन्ति हि ।
निर्वाणशक्तिर्हंसाख्या सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरा स्मृता ।।१४।।

देवगण उसके तेज को विश्व का एक मात्र बीज कहते हैं । इस निर्वाण शक्ति का नाम हंस है जो सूक्ष्म से भी सूक्ष्मतर है ।

तुलनीयः—१. मती कथा (मूलपाठ)

२. शिवस्थानं शैवाः परमपुरुषं वैष्णवगणा ।
लपन्तीति प्रायो हरिहरपदं केचिदपरे ।
पदन्देव्या देवीचरणयुगलाम्भोजरसिका
मुनीन्द्रा अप्यन्ये प्रकृतिपुरुषस्थानममलम् ।।
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, सहस्रारचक्रम्, श्लोक ४५]

३. त्रुटितं अस्ति ।

तन्मध्यबिन्दोर्म्मध्ये तु शून्यं ब्रह्म विभावयेत् ।[1]
सच्चिदानन्दरूपं तत् सर्वकारणकारणम् ॥१५॥

उसके मध्य बिन्दु के मध्य में शून्य ब्रह्म की भावना करे। जो सबका कारण सच्चिदानन्द स्वरूप हैं।

प्रज्ञानं ब्रह्म यद्वाक्यमहं ब्रह्मास्मि यत्पुनः ।
तत्त्वमसीति यद्वाक्यमयमात्मा ब्रह्म इत्यपि ॥१६॥

चतुष्टयमहावाक्यैरेतद् ब्रह्माभिधीयते ।
ब्रह्मविच्चापि लोकेषु ब्रह्मरूपेण वर्त्तते ॥१७॥

'प्रज्ञानं ब्रह्म' अर्थात ज्ञान ही ब्रह्म है। अहं ब्रह्मास्मि अर्थात् मैं ब्रह्म हूँ। तत्त्वमसि अर्थात वह ब्रह्म तुम हो। अयं आत्मा ब्रह्म अर्थात् यह आत्मा ब्रह्म है। इन चार महावाक्यों से उस ब्रह्म का कथन किया जाता है। इसके अतिरिक्त ब्रह्मज्ञानी भी संसार में ब्रह्म रूप में ही वर्तमान हैं।

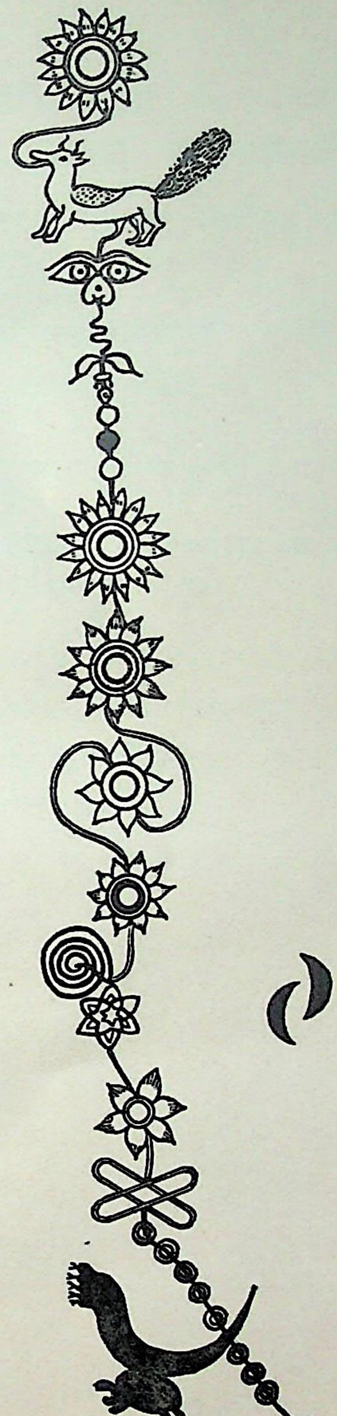
एवं क्रमेण जानाति सहस्रारं शिरःस्थितम् ।[2]
पद्मं गुरूपदेशाद्वै स योगी मुक्तिभाग् नरः ॥१८॥

इस प्रकार जो व्यक्ति शिर में स्थित सहस्रदल कमल को गुरु के उपदेश से जान लेता है वह योगी मनुष्य मुक्ति का अधिकारी होता है।

तुलनीयः—१. एतस्या मध्यदेशे विलसति परमापूर्वनिर्वाणशक्तिः
कोट्यादित्यप्रकाशा त्रिभुवनजननी कोटिभागैकरूपा ।
केशाग्रस्यातिसूक्ष्मा निरवधि विगलत्प्रेमधाराधरा सा
सर्वेषां जीवभूता मुनिमनसि मुदा तत्त्वबोधं वहन्ती ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः, सहस्रारचक्रम्, श्लोक ४९]

२. इह स्थानं ज्ञात्वा नियतनिजचित्तो नरवरोः
न भूयात् संसारे पुनरपि न बद्धस्त्रिभुवने ।
समग्रा शक्तिः स्यान्नियतमनसस्तस्य कृतिनः
सदा कर्त्तुं खगतिरपि वाणी सुविमला ॥
[श्रीतत्त्वचिन्तामणिः, षष्ठाध्यायः सहस्रारचक्रम्, श्लोक ४६]

कुण्डलिनीचक्रम्



चित्रसंख्या : ६

बदरीनाथधीरेण कृता सा चक्रकौमुदी ।
भूयात्प्रीत्यै भगवतो राधामाधवयोरियम् ॥१९॥

बदरीनाथ धीर द्वारा की गई यह चक्रकौमुदी भगवान राधामाधव की प्रीतिदायिनी होवे ।

इतिमैथिलश्रोत्रियश्रीबदरीनाथविरचितायां चक्रकौमुद्यां सहस्रार-चक्रविवृतिर्नाम सप्तमः परिच्छेदः ॥७॥

समाप्तश्चायं ग्रन्थः

इस प्रकार मैथिल श्रोत्रिय श्रीबदरीनाथ विरचित चक्रकौमुदी में सहस्रार-चक्र विवृति नामक सातवाँ परिछेद समाप्त हुआ ।

इति मैथिलश्रोत्रिय-बुधवारयगङ्गौराकुलोत्पन्नबिहारराज्यान्तर्गत-मधुबनीमण्डलान्तर्गतलालगञ्जग्रामवास्तव्य-वत्सगोत्रीय प० श्रीगोविन्द-देवझाशर्मात्मजश्रीजीवेश्वरझाशर्मनिर्मिता चक्रकौमुद्या 'मातङ्गी' नाम्नी हिन्दी टीका समाप्ता ।

परिशिष्टम्

परिशिष्टम् (१)

श्लोकानां वर्णानुक्रमसूची

———

परिशिष्टम् (२)

विशिष्टशब्दानां अकारादिवर्णानुक्रमसूची

———

चक्रकौमुदी हस्तलेख मतानुसार स्थान-दलतत्त्व-वर्णादि स्वरूप

चक्रनाम	स्थान	दलसंख्या	दलवर्णगणना-वर्ण	तत्त्व-तत्त्वगुण	तत्त्ववर्ण	मण्डल-आकार	वीज-वीजवाहन	देवता-वाहन	शक्ति-वर्ण	लिङ्ग
मूलाधार (प्रथमः परिच्छेदः)	गुदलिङ्गान्तर	४	व श ष स स्वर्णाभ	पृथ्वी-गन्ध	पीत	चतुष्कोण	लँ-गज (ऐरावत ?)	ब्रह्मा-हंस	डाकिनी —	स्वयम्भू (त्रिकोणस्थ)
स्वाधिष्ठान (द्वितीयः परिच्छेदः)	लिङ्गमूल	६	ब भ म य र ल सिन्दूराभ	जल-रस	श्वेत	अर्द्धचन्द्राकार पद्मद्वयलांछित	वँ - मकर	विष्णु-गरुड	राकिनी नीलवर्ण	—
मणिपूर (तृतीयः परिच्छेदः)	नाभिमूल	१०	ड ढ ण त थ द ध न प फ नील	वह्नि-रूप	रक्त (नवीन भानुवत्)	त्रिकोण (स्वस्तिकान्वित)	रँ - अज (मेष ?)	रुद्र-वृषभ	लाकिनी सूर्यवत्	—
अनाहत (चतुर्थः परिच्छेदः)	हृदय	१२	क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ वालार्कवत्	वायु-स्पर्श	धूम्र	षट्कोण	यँ - मृग	ईश्वर-(विराट्)	काकिनी पीतवर्णा	ज्वालालिङ्ग (वाण ?)
विशुद्ध (पञ्चमः परिच्छेदः)	कण्ठ	१६	अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ लॄ ए ऐ ओ औ अं अः —	आकाश-शब्द	श्वेत (विद्युप्रभ)	वृत्ताकार	हँ - गज	शङ्कर-(विश्वनाथ)	शाकिनी —	—
आज्ञा (षष्ठः परिच्छेदः)	भ्रुवोर्मध्य	२	ह क्ष	मनस्	शुभ्र	त्रिकोण	—	सच्चिदानन्द	हाकिनी चन्द्रकान्तिवर्ण	—
सहस्रार (सप्तमः परिच्छेदः)	शिरस्	१००० एक सहस्र	—	—	रक्त	शून्य	—	परब्रह्म	—	—

—:०:—

परिशिष्टम् (३)

(षट्चक्रस्य विशिष्टं विवरणम्)

मूलाधारचक्रस्थ पद्मदलतत्त्व

(२८ पृथ्वीतत्त्व • २८ शिवशक्तितत्त्व)

१. महाभूत
   (क) पृथ्वी
   (ख) जल
   (ग) तेज
   (घ) वायु
   (ङ) आकाश

२. तन्मात्रा
   (क) गन्धतन्मात्रा
   (ख) रसतन्मात्रा
   (ग) रूपतन्मात्रा
   (घ) स्पर्शतन्मात्रा
   (ङ) शब्दतन्मात्रा

३. ज्ञानेन्द्रिय
   (क) त्वक्
   (ख) चक्षु
   (ग) श्रोत्र
   (घ) घ्राण
   (ङ) जिह्वा

४. कर्मेन्द्रिय
   (क) वाक्
   (ख) पाणि
   (ग) पाद
   (घ) पायु
   (ङ) उपस्थ

५. अन्तःकरण
   (क) मन
   (ख) बुद्धि
   (ग) चित्त
   (घ) अहङ्कार

६. काल

७. प्रकृति

८. पुरुष

९. महत्

शरीरस्थ १० अग्निस्थान

नाम		स्थान	नाम		स्थान
१—भ्राजक	—	त्वचा	६—बन्धक	—	मज्जा
२—रञ्जक	—	असृक्	७—द्रावक	—	शुक्र

३—क्लेदक	—	मांस	८—व्यापक	—	वायु
४—निस्नेहक	—	मेद	९—पावक	—	पित्त
५—धावक	—	अस्थि	१०—श्लेष्मक	—	कफ

मूलाधारचक्र निस्सरित

१० प्रधान नाड़ी

नाम		गन्तव्य अङ्ग	नाम		गन्तव्य अङ्ग
१—इडा	—	मेरुमूल से शून्य चक्र पर्यन्त	६—सुपूषा	—	दक्षिण कर्ण
२—पिङ्गला	—	,, ,,	७—यशस्विनी	—	वाम ,,
३—सुषुम्णा	—	,, ,,	८—अलम्बुषा	—	मुख
४—गान्धारी	—	वाम नेत्र	९—शंखिनी	—	मूल देश
५—हस्तिजिह्वा	—	दक्षिण नेत्र	१०—कुहू	—	लिङ्ग

शरीरस्थ १० वायु

नाम		स्थान	नाम		स्थान
१—प्राण	—	नासाग्र	६—नाग	—	उद्गिरण
२—अपान	—	अध: स्थान	७—कूर्म	—	उन्मीलन
३—समान	—	मध्यदेह	८—कृकल	—	क्षुधा
४—उदान	—	कण्ठदेश	९—देवदत्त	—	विजृम्भण
५—व्यान	—	सम्पूर्णदेह	१०—धनञ्जय	—	पोषण

मूलाधारचक्रस्थ शिवशक्ति

शिवस्वरूप	शक्तिस्वरूप
१. उड्डीश्वर	उड्डीश्वरी
२. जलेश्वर	जलेश्वरी
३. कामेश्वर	कामेश्वरी
४. पूर्णेश्वर	पूर्णेश्वरी
५. श्रीकण्ठ	गगना
६. अनन्त	सुरसा

७.	शङ्कर	मति
८.	पिङ्गल	ईश्वरपर्यन्ता
९.	नाद	डाकिनी
१०.	आलस्य	राकिनी
११.	महानन्द	लाकिनी
१२.	योग	शाकिनी
१३.	अतीत	शाकिनी
१४.	पारद	हाकिनी
१५.	आधारेश	रक्ता
१६.	चक्रेश	चण्डी
१७.	कुरङ्गीश	करालिका
१८.	महघ्रीश	महोच्छ्वासा
१९.	अनादि	विमला
२०.	सर्वज्ञ	मातङ्गी
२१.	पुमिहा	विमला
२२.	योगविमद	शाम्भवी
२३.	विद्धविमल	परा
२४.	समयविमल	कुलालिका
२५.	मित्रेश	कुलेश्वरी
२६.	कुब्ज	कुब्जा
२७.	उड्डीश	नयना ?
२८.	अवेश	चर्या

स्वाधिष्ठानचक्रस्थ पद्मदलतत्त्व

(२६ जलतत्त्व • २६ शिवशक्तितत्त्व)

१. महाभूत
(क) पृथ्वी
(ख) जल
(ग) तेज
(घ) वायु

४. कर्मेन्द्रिय
(क) वाक्
(ख) पाणि
(ग) पाद
(घ) पायु

(ङ) आकाश

२. ज्ञानेद्रिय

(क) त्वक्

(ख) श्रोत्र

(ग) चक्षु

(घ) घ्राण

(ङ) रसना

३. तन्मात्रा

(क) स्पर्शतन्मात्रा

(ख) श्रवणतन्मात्रा

(ग) दर्शनतन्मात्रा

(घ) गन्धतन्मात्रा

(ङ) आस्वादतन्मात्रा

(ङ) उपस्थ

५. तन्मात्रा

(क) वाणीतन्मात्रा

(ख) दानतन्मात्रा

(ग) गतितन्मात्रा

(घ) विसर्गतन्मात्रा

(ङ) आनन्दतन्मात्रा

६. मन

स्वाधिष्ठानचक्रस्थ शिवशक्ति

शिवस्वरूप	शक्तिस्वरूप
१. सद्योजात	माया
२. वामदेव	श्री
३. अघोर	पद्मा
४. तत्पुरुष	अम्बिका
५. अनन्त	निवृत्ति
६. अनाथ	प्रतिष्ठा
७. जनाश्रित	विद्या
८. अचिन्त्य	शान्ता
९. शशिशेखर	उमा
१०. तीव्र	गङ्गा
११. वणिवाह	सरस्वती
१२. अम्बुवाह	कमला
१३. तेजोधीश	पार्वती
१४. वाणीश्वर	विद्या

१५. चतुर्विध	छिन्ना
१६. ईश्वर	कमला
१७. गङ्गेश्वर	उमा
१८. कृष्णेश्वर	मन्मथा
१९. श्रीकण्ठ	श्रीपा
२०. आनन्द	सती
२१. शङ्कर	रत्नमेखला
२२. पिङ्गल	यशोवती
२३. साध्य	हंसा
२४. दिव्यौघ	परा
२५. पाठौघ	ज्येष्ठा
२६. सर्वेश्वर	रौद्री

मणिपूरचक्रस्थ पद्मदलतत्त्व

(३१ अग्नितत्त्व : ३१ शिवशक्तितत्त्व)

१. महाभूत
(क) पृथ्वी
(ख) जल
(ग) तेज
(घ) वायु
(ङ) आकाश

२. तन्मात्रा
(क) गन्धतन्मात्रा
(ख) रसतन्मात्रा
(ग) रूपतन्मात्रा
(घ) स्पर्शतन्मात्रा
(ङ) शब्दतन्मात्रा

३. कर्मेन्द्रिय
(क) वाक्

४. तन्मात्रा
(क) वाणीतन्मात्रा
(ख) दानतन्मात्रा
(ग) गतितन्मात्रा
(घ) विसर्गतन्मात्रा
(ङ) आकाशतन्मात्रा

५. ज्ञानेन्द्रिय
(क) त्वक्
(ख) श्रोत्र
(ग) घ्राण
(घ) चक्षु
(ङ) रसना

६. तन्मात्रा
(क) स्पर्शतन्मात्रा

(ख) पाणि
(ग) पाद
(घ) पायु
(ङ) उपस्थ

(ख) श्रवणतन्मात्रा
(ग) गन्धतन्मात्रा
(घ) दर्शनतन्मात्रा
(ङ) आस्वादतन्मात्रा

७. मन

मणिपूरचक्रस्थ शिवशक्ति

शिवस्वरूप	शक्तिस्वरूप
१. परावरेश	चण्डेश्वरी
२ परम	चक्षुष्मती
३. तत्पर	गुह्यकाली
४. पर	सम्वर्ता
५. चिदानन्द	मूलकूब्जा
६. अघोर	गङ्गा
७. स्वच्छ	ललिता
८. सामरस	स्पर्शा
९. भूतेश्वर	शब्दा
१०. आनन्द	डाकिनी
११. आलस्य	रत्नडाकिनी
१२. योगानन्द	चक्रडाकिनी
१३. उमानन्द	पद्मडाकिनी
१४. अतीत	कुब्जडाकिनी
१५. योगेश्वर	प्रचण्डडाकिनी
१६. रसस्नाद	चण्डकौशला
१७. पाठेश्वर	पावनी
१८. कुलकेश्वर	समया
१९. कुलेश्वर	कामा
२०. श्रीकण्ठ	रेवती
२१. शङ्कर	ज्वाला

२२.	अनन्त	करणा
२३.	पिङ्गल	कुलिका
२४.	सद्	रात्रि
२५.	करालक	गुरूपारा
२६.	सिद्धगुरु	शान्ति
२७.	रत्नगुरु	अतीता
२८.	शान्त	शान्ता
२९.	शिवगुरू	प्रतिष्ठा
३०.	सेनगुरु	क्रिया
३१.	समयगुरु	निवृत्ति

विशुद्धचक्रस्थ पद्मदलतत्त्व

(३६ व्योमतत्त्व • ३६ शिवशक्तितत्त्व)

१. पुरुष
२. प्रकृति
३. अहङ्कार
४. बुद्धि
५. मन
६. ज्ञानेन्द्रिय
   (क) चक्षु
   (ख) श्रोत्र
   (ग) घ्राण
   (घ) रसना
   (ङ) त्वक्
७. तन्मात्रा
   (क) रूपतन्मात्रा
   (ख) शब्दतन्मात्रा
   (ग) गन्धतन्मात्रा
   (घ) रसतन्मात्रा

८. महाभूत
   (क) तेज
   (ख) आकाश
   (ग) पृथ्वी
   (घ) जल
   (ङ) वायु
९. कर्मेन्द्रिय
   (क) वाक्
   (ख) पाणि
   (ग) पाद
   (घ) पायु
   (ङ) उपस्थ
१०. शुद्धविद्या
११. माया
१२. कलाविद्या
१३. राग

(ङ) स्पर्शतन्मात्रा	१४. काल
	१५. नियति

● मूलग्रन्थ में उपरोक्त ३१ तत्त्वों का ही मात्र उल्लेख किया गया है। अवशिष्ट ५ तत्त्वों का समावेश ग्रन्थान्तरों से संग्रहणीय है ● —सम्पादक।

विशुद्धचक्रस्थ शिवशक्ति

शिवस्वरूप	शक्तिस्वरूप
१. हृदय	कालिकी
२. धर	कान्ता
३. भोग	शिवेश्वरी
४. उभय	योगिनी
५. मह	पद्मरागा
६. सर्वं	शबरी
७. द्रव	कालिका
८. जुष्ट	चाण्डाली
९. मोह	अघोरा
१०. मनोभव	हेला
११. महाकुल	लाकिनी
१२. ज्ञानगुह्य	कुब्जिका
१३. खेचर	डाकिनी
१४. ज्वलन	राकिनी
१५. महाकूल	लाकिनी
१६. भीयोज्वल	काकिनी
१७. तैजस	शाकिनी
१८. मूर्द्धा	हाकिनी
१९. वायु	पापघ्नी
२०. कुल	सिंहा
२१. संहार	कुलाम्बिका
२२. विश्वेश्वर	कामा

२३.	कोटिल	काममातृका
२४.	गालव	कङ्काली
२५.	व्योम	व्योमा
२६.	श्वसन	आनन्दा
२७.	खेचर	महादेवी
२८.	वाहुल	महत्तरी
२९.	तात	कुण्डलिनी
३०.	कुलातीत	कुलेशी
३१.	अज	गन्धिका
३२.	मनन	पीडिका
३३.	ईश	रेचिका
३४.	शिख	णेचिका
३५.	परम	परा
३६.	पर	दिति

अनाहतचक्रस्थ पद्मदलतत्त्व

(२७ वायुतत्त्व • २७ शिवशक्तितत्त्व)

१. महाभूत
- (क) पृथ्वी
- (ख) जल
- (ग) तेज
- (घ) वायु
- (ङ) आकाश

२. तन्मात्रा
- (क) गन्धतन्मात्रा
- (ख) रसतन्मात्रा
- (ग) रूपतन्मात्रा
- (घ) स्पर्शतन्मात्रा
- (ङ) शब्दतन्मात्रा

३. कर्मेन्द्रिय

४. ज्ञानेन्द्रिय
- (क) त्वक्
- (ख) श्रोत्र
- (ग) घ्राण
- (घ) रसना
- (ङ) चक्षु

५. पुरुष

६. प्रकृति

७. काल

(क) वाक्

(ख) पाणि

(ग) पाद

(घ) पायु

(ङ) उपस्थ

● मूलग्रन्थ में २३ तत्त्वों का ही उल्लेख किया गया है। अवशिष्ट ४ तत्त्वों का समावेश ग्रन्थान्तरों से संग्रहणीय है ● — सम्पादक।

अनाहतचक्रस्थ शिवशक्ति

शिवस्वरूप	शक्तिस्वरूप
१. खगेश्वर	भद्रा
२. कूर्म	आधारा
३. मेघ	शोका
४. मीन	मल्लिका
५. ज्ञान	विमला
६. सदानन्द	शर्वरी
७. तीव्र	लीला
८. प्रिय	कुमुदा
९. कालिक	मैनाकी
१०. नाम	लाकिनी.
११. काम	काकिनी
१२. डामर	डामरी
१३. विष्णु	राकिनी
१४. सामय	शाकिनी
१५. निकामर	हाकिनी
१६. धारेश	राका
१७. चक्रीश	विन्दु
१८. कुरव	श्रीकला
१९. श्रीश	समया
२०. हृदीश	कुब्जिका

२१. शिरस	कुलदीर्घिका
२२. शिखेश	अवचरा
२३. चर्मी	बहुरूपा
२४. अस्त्रेश	महत्तरी
२५. परमगुरु	मङ्गला
२६. पराधिगुरु	कौशला
२७. पूज्यगुरु	वामा

आज्ञाचक्रस्थ पद्मदलतत्त्व

(३२ मानसतत्त्व • ३२ शिवशक्तितत्त्व)

१. वाणी
   (क) परा (मूलचक्रस्था)
   (ख) पश्यन्ती (नाभिगा)
   (ग) मध्यमा (हृदयस्था)
   (घ) वैखरी (कण्ठगा)

२. इच्छाशक्ति
   (क) उपकर्तुं इच्छा
   (ख) प्रतिकर्तुं ,,
   (ग) कर्तुं ,,
   (घ) कारयितुं ,,
   (ङ) उदासितुं ,,

३. ज्ञानशक्ति
   (क) निरालम्बन
   (ख) सालम्बन

४. तन्मात्रा
   (क) ज्ञातृ
   (ख) ज्ञेय

५. क्रियाशक्ति
   (क) इष्टापूर्त्त
   (ख) स्वाध्याय
   (ग) जप
   (घ) पूजा
   (ङ) तप
   (च) दान

६. कुण्डलीशक्ति
   (क) उन्नय
   (ख) लय
   (ग) प्रत्यावृत्ति
   (घ) विश्रान्ति

७. मातृकाशक्ति
   (क) अवर्ग (१६ वर्ण)
   (ख) कवर्ग (५ वर्ण)
   (ग) चवर्ग (५ वर्ण)
   (घ) टवर्ग (५ वर्ण)

(ग) ज्ञप्ति

(ङ) तवर्ग (५ वर्ण)

(च) पवर्ग (५ वर्ण)

(छ) यवर्ग (४ वर्ण)

(ज) शवर्ण (६ वर्ण)

आज्ञाचक्रस्थ शिवशक्ति

शिवस्वरूप	शक्तिस्वरूप
१. यज्ञ (भव ?)	पराभव
२. अचित्	चित्परा
३. महामाया (?)	महामाया
४. इच्छा	इच्छापरा
५. सृष्टि	सृष्टिपरा
६. सदसत्	सदसत्परा
७. क्रिया	क्रियापरा
८. आत्मा	आत्मपरा
९. इन्द्रियाश्रय	इन्द्रियाश्रयपरा
१०. गोचर	गोचरपरा
११. लोकमुख्य	लोकमुख्यपरा
१२. वेदतत्त्व	वेदतत्त्वपरा
१३. संवित्	संवित्परा
१४. कुण्डली	कुण्डलीपरा
१५. सौषुम्ण	सौषुम्णपरा
१६. प्राणसूत्र	प्राणसूत्रपरा
१७. स्पन्द	स्पन्दपरा
१८. मातृका	मातृकापरा
१९. स्वरोद्भव	स्वरोद्भवपरा
२०. वर्णज	वर्णजपरा
२१. शब्दज	शब्दजपरा
२२. वर्णज	वर्णजपरा
२३. वर्गज	वर्गजपरा

२४. संयोग — संयोगपरा

२५. मन्त्रविग्रह — मन्त्रविग्रहा

● मूलग्रन्थ में २५ शिवशक्ति तत्त्वों का ही उल्लेख है, अवशिष्ट ७ तत्त्वों का समावेश ग्रन्थान्तरों से संग्रहणीय है ● —सम्पादक।

सहस्रारचक्रस्थ पद्मदलतत्त्वादिस्वरूप

(सहस्रदलपद्म)

१. वर्ण—रक्त

२. रूप—२० आवर्त्त

३. स्थिति—अधोमुख दल (पूर्णं विधु सदृश)

४. त्रिकोण—(अ क थ तीन कोणों में तथा ह ल ध (स्थिति)

५. सूर्याग्निवत् एककन्द (उसके मध्य में)

६. गुरुमन्त्र—ह, स, ख, फ्रें, ह, स, क्ष, म, ल, व, र, युं

७. सूर्यमण्डल (उसके ऊपर)

८. चन्द्रमण्डल (,,)

९. महावायु (,,)

१०. ब्रह्मरन्ध्र

(क) हंसः
(ख) महती सूक्ष्मा चन्द्रकला } कर्णिका में
(ग) निर्वाण कला (अधोमुखी)
(घ) कोटिचन्द्रार्क नित्याकला (अधोमुखी)
} क्रमशः उसके मध्य में।

११. शून्यब्रह्म (सच्चिदानन्द स्वरूप) अन्त में।

———